ISSN 2454-504X 16-30 अप्रैल, 2025 राष्ट्रीय पाक्षिक पत्रिका RNI No. DELHIN/2002/08663 ₹ 15

दूसरा मत

दूसरा मत कामयाबी के 22 साल

www.doosramat.com YOUTUBE DOOSRA MAT जहां सच बोलते हैं शब्द

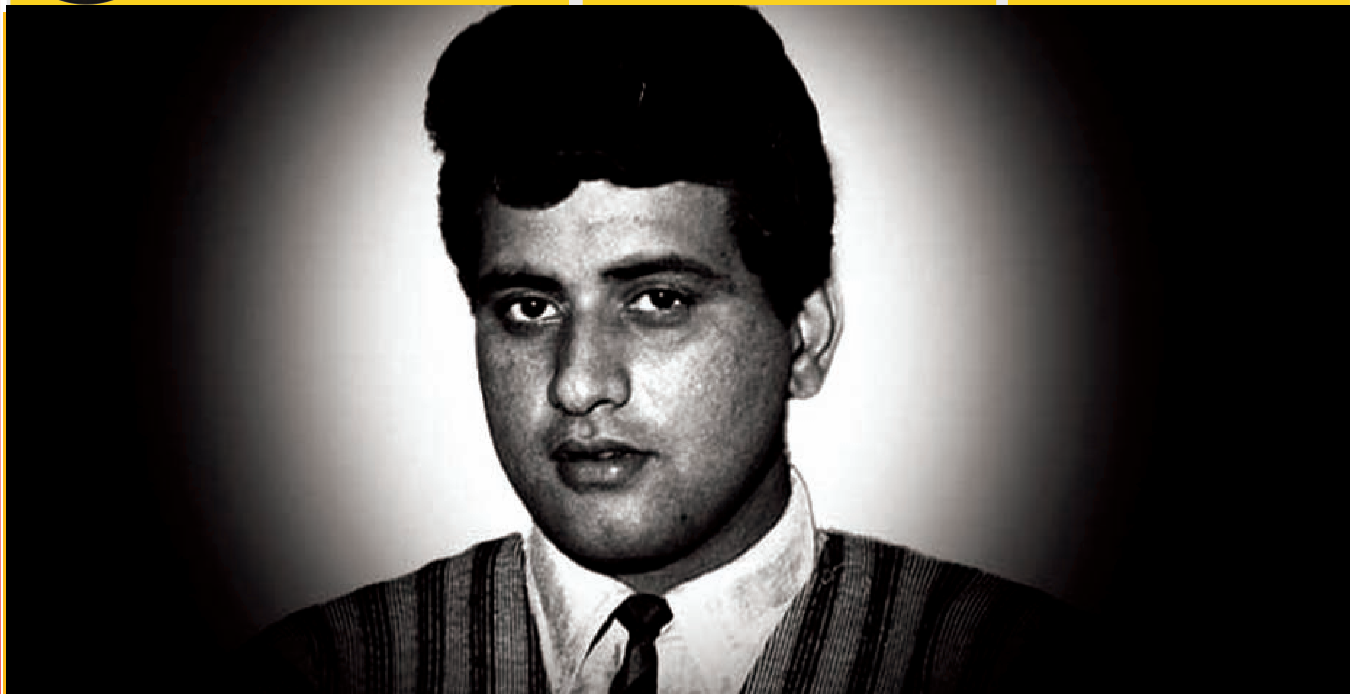

नहीं रहे भारत कुमार

छवि पे दाग़

दूसरा मत

पढ़ें और पढ़ाएं,
एक शुभचिंतक, दिल्ली

दूसरा मत वार्षिक सदस्यता

व्यक्तिगत एक वर्ष स्पीड पोस्ट सहित 2500 रूपए
संस्थागत एक वर्ष स्पीड पोस्ट सहित 5000 रूपए
पीडीएफ प्रतिवर्ष 500 रुपए

नौकरी दो पलायन रोको यात्रा में शामिल हुए राहुल गांधी

डॉ कन्हैया कुमार की नौकरी दो पलायन रोको यात्रा के सिलसिले में राहुल गांधी का बेगूसराय आगमन राजनैतिक गलियारों में विमर्श का बड़ा केन्द्र बना हुआ है। यात्रा तो अपने निर्धारित लक्ष्य और कार्यक्रम के तहत आगे निकल गई पर इसने बेगूसराय को बिहार की राजनीती के केन्द्र में लाकर खड़ा कर दिया है। यात्रा के दौरान स्वतः स्फूर्त उमड़ी ऐतिहासिक भीड़, कार्यकर्ताओ के जोश और पलायन, रोजगार जैसे मुद्दों पर चौक चौराहों तक हो रही विमर्श से कांग्रेस के नेता और कार्यकर्ता गदगद हैं।

सदर बेगूसराय की पूर्व विधायक अमिता भूषण और उनकी पूरी टीम पिछले कई दिनों से इस कार्यक्रम की सफलता के लिए जिस कदर मेहनत कर रही थी कार्यक्रम की ऐतिहासिक सफलता से उनके भी चेहरे पर सकून का भाव दिखा। श्रीमती भूषण नें कहा कि इस यात्रा को सिर्फ बेगूसराय के परिपेक्ष्य में देखना उचित नहीं है। यह सही है कि यात्रा और यात्रा में राहुल गांधी जी की उपस्थिति बेगूसराय और बेगूसराय के कांग्रेस जन के लिए ऐतिहासिक अवसर था पर यह यात्रा एक व्यापक उद्देश्य की यात्रा है, जो बिहार और बिहार के युवाओं के भविष्य पर कांग्रेस के दृष्टिकोण को दिखाता है। बेगूसराय के कांग्रेस कार्यकर्ताओं नें इसके लिए जो दिन रात मेहनत की है, इसके लिए उन्होंने एक एक कार्यकर्ता के प्रति अपना आभार प्रकट किया है। उन्होंने कहा कि पदयात्रियों के स्वागत, उनकी सुविधा के लिए जो मेहनत हमारी टीम, जिला कांग्रेस के कार्यकर्ता ने की है उनके प्रति भी मेरा आभार है। इतनी बड़ी भीड़ को संभालना, उनके लिए सभी जरूरी चीजों का इंतजाम काफी चुनौतीपूर्ण तो था, पर हम इस चुनौती से पार पाने में सफल रहे। श्रीमती भूषण उन तमाम वर्गों, बुद्धिजीवियों, किसानों, मजदूरों, संस्थानों के प्रति भी आभार प्रकट किया है जिन्होंने जाती, धरम और वर्ग से ऊपर उठकर इस यात्रा में शामिल हुए। इनमें महिलाओं, महिला संगठनों, व्यापारी वर्ग, अधिवक्ता समुदाय, शिक्षक समुदाय, चिकित्सा व्यवसाय से जुड़े लोग शामिल थे। यात्रा के संदर्भ में कुछ भाजपा नेताओं के बयानों के संदर्भ में अमिता भूषण नें कहा कि वो ऐसे नेताओं के बयानों पर प्रतिक्रिया देना महत्वपूर्ण नहीं समझती। ऐसे नेताओं की राजनीतिक रोटी दाल उस दल में इसी से चलती है। कुछ नेताओं के दूर की दृष्टि के चश्मे का नंबर बदलने की जरूरत है, उन्हें न भीड़ दिखती है, न महगाई, बेरोजगारी और पलायन। हमलोगों का उद्देश्य राहुल गांधी जी के दिए गए सांगठनिक टिप्स और टास्क का अनुसरण करते हुए बिहार में राजनैतिक बदलाव के मिशन के साथ बिहार के भविष्य को संवारनें की दिशा में काम करना है ना कि ऐसे बड़बोले नेताओं के बयानों पर ध्यान देना है।

बेगूसराय से एस आर आज़मी की रिपोर्ट

दूसरा मत
जहां सच बोलते हैं शब्द

RNI No. DELHIN/2002/08663

वर्ष: 24, अंक: 08

16-30 अप्रैल, 2025

संपादक
ए आर आज़ाद

संपादकीय सलाहकार
मन्त्रेश्वर झा (IAS R.)
(पूर्व प्रमुख सलाहकार, योजना आयोग, भारत सरकार)

प्रमुख परामर्शी एवं प्रमुख क़ानूनी सलाहकार
न्यायमूर्ति राजेन्द्र प्रसाद
(अवकाश प्राप्त न्यायधीश, पटना उच्च न्यायालय)

प्रमुख सलाहकार
जियालाल आर्य (IAS R.)
(पूर्व गृह सचिव एवं पूर्व चुनाव आयुक्त बिहार)

ब्यूरो प्रमुख
रुफी शमा

राजनीतिक संपादक
देवेंद्र कुमार प्रभात

बेगूसराय ब्यूरोचीफ
सह ब्यूरो बिहार
एस आर आज़मी

ब्यूरो ऑफिस बिहार
बजरंगबली कॉलोनी, नहर रोड,
जज साहब के मकान के सामने, फुलवारी शरीफ,
पटना, बिहार-801505

संपादकीय एवं पंजीकृत कार्यालय
81-बी, सैनिक विहार, फेज़-2, मोहन गार्डेन,
उत्तम नगर, नई दिल्ली-110059
Email: doosramat@gmail.com
MOBILE. 9810757843
Whatsapp. 9643709089

स्वामी, मुद्रक, प्रकाशक एवं संपादक
ए आर आज़ाद द्वारा 81-बी, सैनिक विहार, फेज़-2, मोहन गार्डेन, उत्तम नगर, नयी दिल्ली-110059 से प्रकाशित एवं शालीमार ऑफसेट प्रेस, 2622, कूचा चेलान, दरियागंज, नयी दिल्ली-110002 से मुद्रित।
संपादक-ए आर आज़ाद

पत्रिका में छपे सभी लेख, लेखकों के निजी विचार हैं, इनसे संपादक या प्रकाशक का सहमत होना अनिवार्य नहीं। पत्रिका में छपे लेखों के प्रति संपादक की जवाबदेही नहीं होगी।
सभी विवादों का समाधान दिल्ली की हद में आने वाली सक्षम अदालतों में ही होगा।
**उपरोक्त कुछ पद अवैतनिक हैं।*

पड़ताल 06
परिसीमन का राजनीतिक मतलब

गौरतलब 14
सोनिया के लेख के निहितार्थ

"राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद (NCERT) की किताबों से मुगल काल और महात्मा गांधी की हत्या से जुड़े हिस्सों को सिलेबस से निकाला गया।
सोनिया गांधी

मीमांशा 18
अमेरिकी टैरिफ : भारत को...?

नज़रिया 28
... निपटा पाएंगे अश्विनी चौबे?

आवरण 40
भारत का जाना

ज़रूरी सवाल 46
... किसको मिल रहा है फायदा

मौजू 56
कितनी पारदर्शिता की ओर

चिंता : बच्चों के भोजन में न्यूट्रिएंट... 52
संस्कृति : लुप्त हो रही हैं कठपुतलियां 60
जलसा : राजेन्द्र माथुर प्रसंग 62
सम्मान : ज्ञानपीठ सम्मान और..... 66
स्वर : समकालीन महिलाओं के स्वर 68
व्यंग्य : पकड़े गए दोस्त के नाम 70
कहानी : अधूरी प्रार्थना 74

छवि पे दाग़

ए आर आज़ाद

देश में राजनीति किस हद तक परवान चढ़ती है, इसका अंदाज़ा टोपी पहने हुए दो चेहरे को देखकर आप सहज लगा सकते हैं। ये दोनों वैसे चेहरे हैं, जो मुसलमानों को अपना रहबर, अपना रहनुमा और अपना सबकुछ होने का भाव जगा कर सत्ता का ज़ायक़ा लेते हैं। और जब सिंहासन हिलते-हिलते खिलने लगता है, तो एक बेवक़ूफ़ क़ौम, जिसे आज कल कुछ लोग मुसलमान भी कहते हैं, उनसे दूरी बना लेते हैं।

ये दोनों चेहरे वोट के मौसम में टोपी भी पहन लेते हैं। और नमाज़ के लिए भी खड़े हो जाते हैं। और अपने ईश्वर से दुआ भी मांगते हैं कि हे ईश्वर इस क़ौम को कभी समझ न देना। कभी आपसी एकता में रहने नहीं देना। कभी इनके अंदर क़यादत पैदा नहीं होने देना। और इन्हें इतना अपंग बना देना कि ये सब दिन हमारी राजनीतिक दरी और हमारे लिए मस्जिदों में, ख़ानक़ाहों में और अपनी इबादतगाहों में रेड कारपेट बिछाते रहें।

इनकी इस दुआ पर ज़ाहिर है कि तथाकथित मुस्लिम धर्मगुरू, वक़्फ़ को लूट कर ऐशो आराम की ज़िंदगी बीताने वाले दरगाहों और ख़ानक़ाहों के सज्जादानशीं, मुतव्वली और तलवे चाट कर सियासत का मज़ा चखने की ललक रखने वाले क़ौम के धोखेबाज़ तथाकथित मुस्लिम नेतृत्व आमीन भी बोलते हैं।

यह सबको मालूम है कि जब रब के सामने उसका बंदा दुआ मांगता है, तो उसकी दुआएं कई बार रद्द नहीं होती हैं। फ़ौरण क़बूल हो जाती हैं। आज एक ज़माने से नीतीश और नायडू की दुआएं मुसलमानों को लेकर जो भी मांगी जा रही हैं, वे क़ुबूलियत के शीर्ष पर हैं। ऐसी ही दुआ किसी ज़माने में आरजेडी सुप्रीमो लालू प्रसाद यादव मांगा करते थे, और वे भी टोपी पहनकर ही मांगा करते थे। रमज़ान में ही वक़्त ए रोज़ा के दौरान मांगा करते थे। और उनकी भी दुआएं क़ुबूल होती थी। उनके ज़माने में भी मुसलान झोली-भर-भर कर उन्हें वोट देता था। बदले में लाचारी, भूख, बेबसी, प्रताड़ना, बेकारी और ख़ौफ़ जैसे कई सौग़ात नीतीश कुमार की तरह ही लालू प्रसाद यादव भी देते थे। इसी तरह चंद्रबाबू नायडू जैसे देश के शीर्ष नेताओं ने भी इन्हीं अंदाज़ में मुसलमानों के लिए दुआएं मांगी। और उन्हें इस क़ाबिल नहीं छोड़ा कि वो अपना घर संवार सकें। अपनी औक़ाद के मुताबिक़ अपनी भागीदारी सुनिश्चित कर सकें। या इस तरह का मन में मुग़ालता भी पाल सकें।

देश के प्रधानमंत्री बनने के बाद नरेंद्र मोदी ने मुसलमानों को असली औक़ात 56इंच के सीना के साथ दिखाई। और सीना तानकर और ललकार कर कहा कि हमें तुम्हारे वोट की ज़रूरत नहीं है। और प्रधानमंत्री ने यह करके भी दिखाया। यानी उन्होंने मुसलमानों को जो बिना कुछ कहे पैग़ाम दिया, उसका लब्बोलुआब यही है कि तुम जब तक सेक्युरिज़्म के नाम पर अपने ठग से ठगाते रहोगे, तुम्हारा कुछ नहीं होने वाला है। और हमारा कुछ नहीं बिगड़ने वाला है।

दरअसल बीजेपी का सपना मुस्लिम वोट है। वह आक्रोश में इसलिए रहती है कि मुसलमान उसे अछूत समझता है। मुसलमान की दिक़्क़त यह है कि वह ठगाने में माहिर हो चुका है। उसे तल्ख़ बात पसंद नहीं। मुसलमानों को यह पता नहीं कि कड़वा कहने वाला मीठा कहने वालों से लाख दर्जे का बेहतर होता है। मुसलमानों में सेक्युरिज़्म के नाम पर क़यादत को ही ख़त्म कर दिया गया। आज मुस्लिम क़यादत पर कोई बात नहीं हो रही है। इससे बड़ी इस क़ौम की बदनसीबी और क्या हो सकती है? हैरत तो यह है कि जो धार्मिक धर्मगुरु हैं, उनमें धन और पदलोलुपता की सनक इतनी हाबी हो गई है कि वह भूल गएं हैं कि मुसलमान का मतलब क्या होता है? उन्हें अपने पैग़म्बर के नक़्शे पर चलना था, वह बादशाहों और अय्याशों के नक़्शे पर चलने लगे हैं। क़ुरआन इसराफ़ की बात करता है। और ये ख़ानक़ाह के लोग और वक़्फ़ के मुतव्वली खुलकर फ़िज़ूलख़र्ची करते हैं। ऐसे लोगों को न तो इस्लाम से कोई मतलब है। और न ही मुसलमान से। देश और समाज तो पहले ही इनसे बहुत पीछे छूट चुका है।

अब जब देश के प्रधानमंत्री ने मुसलमानों के असली हक़दार के लिए वक़्फ़ के नक़ली क़ब्ज़ाधारियों से वक़्फ़ को मुक्त कराने की योजना को संसद और संविधान के ज़रिए धरातल पर लाने की कोशिश की है तो इनका दम निकले लगा है। ये अपने विरोध से सरकार के ऐतिहासिक क़दम को पीछे धकेलना चाहते हैं। जो नामुमकिन है। वक़्त गवाह है जब-जब मुसलमानों ने अत्याचार किया, तब-तब उससे सत्ता, शासन और एक्तिदार छीन लिया गया है।

ऐसे लोगों को मैं एक जुमला फिर से याद दिला देना चाहता हूं,-मोदी है तो मुमकिन है। हालांकि नीतीश और नायडू की छवि तो धूमिल हो ही गई है।

जय हिन्द! जय भारत!!

बीजेपी सरकार के परिसीमन का राजनीतिक मतलब

के.पी. मलिक
वरिष्ठ पत्रकार एवं राजनीतिक विश्लेषक

केंद्र की बीजेपी के नेतृत्व वाली एनडीए की मोदी सरकार नीतीश और नायडू नामक बैसाखियों के सहारे तीसरे टर्म में है, बैसाखी की सरकार में अपनी कुर्सी पर बार-बार खतरा देखते हुए पीएम मोदी हमेशा के लिए प्रधानमंत्री बने रहने के लिए कुछ भी करने को, यहां तक की कोई भी षड्यंत्र रचने तैयार नजर आते हैं, और कर भी रहे हैं। और इसमें उनका साथ उनके दाहिने हाथ अमित शाह देते हैं। फिर चाहे वो राज्यों में सत्ता हथियाने का षड्यंत्र हो, चाहें विपक्षियों को खत्म करने का मामला हो, चाहे अपनी ही पार्टी के विरोधियों को ठिकाने लगाने का षडयंत्र हो या फिर चाहे देश में उनके खिलाफ उठने वाले आंदोलनों को कुचलने का षड्यंत्र हो। लेकिन इन सबके बावजूद उनकी कुर्सी पर खतरा टलने का नाम नहीं ले रहा है और उन्होंने अपने दाहिने हाथ गृह मंत्री अमित शाह के साथ मिलकर जो कम से कम 50 साल तक सत्ता में रहने, यानि भाजपा को अगले कम से कम 50 साल तक सत्ता में रखने का सपना देखा है, वो कहीं न कहीं बिखरता हुआ नजर आ रहा है। और ये तब हो रहा है, जब भाजपा का उत्तर भारत के राज्यों में दबदबा बढ़ता जा रहा है। लेकिन दक्षिणी राज्यों में भाजपा की दाल न गल पाने के चलते अब भाजपा यानी प्रधानमंत्री मोदी, गृह मंत्री अमित शाह और भाजपा के दूसरे बड़े नेता, यहां तक की संघ भी उत्तर भारत के ही राज्यों के सहारे केंद्र में आगामी 50 सालों तक कब्जा

चाहता है। यानी एक ऐसा तरीका, जिससे अगर दक्षिण भारत के राज्यों में बीजेपी को सीटें न भी मिलें, फिर भी वो केंद्र की सत्ता में पूर्ण बहुमत की सरकार बना सके और ये रास्ता है परिसीमन का।

दरअसल, प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के बारे में ऐसा कहा जाता है कि वो अपने होते किसी और को किसी भी हाल में देश का प्रधानमंत्री नहीं देखना चाहते और इसी के चलते उन्होंने पहले अपने नाम और देश से किए वायदों के दम पर सत्ता में जमे रहने की कोशिश की, लेकिन जब देखा कि खाली जुमलों, वायदों और नाम भर से सत्ता हमेशा के लिए हाथ में नहीं रह सकेगी, तो उन्होंने अपने दाहिने हाथ और दूसरे टर्म में देश के गृह मंत्री बने अमित शाह के सहारे विपक्षी पार्टियों को तोड़ने की कोशिश करके अपने सरकार बनाने का काम करने की कोशिश की, फिर विपक्षी पार्टियों को खत्म करने की कोशिश होने लगी और अब इसके साथ-साथ परिसीमन की तैयारी केंद्र की मोदी सरकार कर रही है। हालांकि परिसीमन की चर्चा देश में कोई नई नहीं है और न ही परिसीमन कोई पहली बार होगा, लेकिन देश में अब तक तीन बार हो चुके परिसीमन से पहले देश की जनगणना भी हुई है, लेकिन अब साल 2011 के बाद से कोई जनगणना नहीं करवाई जा रही है और एक अनुमानित आंकड़े पेश किए जा रहे हैं, जिसके हिसाब से देश की जनसंख्या तकरीबन 1 अरब 44 करोड़ से 1 अरब 50 करोड़ के बीच मानी जा रही है। हालांकि केंद्र की मोदी सरकार अभी तक 140 करोड़ के आंकड़े को ही पार नहीं कर पा रही है। हालांकि देश में जनगणना नहीं कराना और जनसंख्या के आंकड़े छुपाना एक दूसरा मुद्दा है, लेकिन परिसीमन से जुड़ा मुद्दा जनसंख्या के बहुत करीब है, क्योंकि परिसीमन करके जो सीटें लोकसभा और राज्यसभा में बढ़ाई जाएंगी, वो जनसंख्या के हिसाब से ही बढ़ाई जाएंगी।

बहरहाल, परिसीमन जब होगा, तब होगा, लेकिन इसे लेकर मोदी सरकार की खिलाफत बड़े स्तर पर शुरू हो गई है और दक्षिण भारत के 8 राज्यों के मुख्यमंत्रियों ने मोदी सरकार के खिलाफ इस मुद्दे पर न सिर्फ जेएसी नाम से एक मोर्चा बना लिया है, बल्कि परिसीमन की खिलाफत शुरू कर दी है। जेएसी यानी जैक ज्वाइंट एक्शन कमेटी का गठन तमिलनाडु के मुख्यमंत्री एमके स्टालिन ने किया है। और इसमें उनके अलावा 7 मुख्यमंत्री और हैं। इनमें से पांच दक्षिण भारतीय राज्यों तमिलनाडु के मुख्यमत्री एमके स्टालिन के अलावा केरल के मुख्यमंत्री पिनाराई विजयन, कर्नाटक के मुख्यमंत्री सिद्धारमैया, तेलंगाना के मुख्यमंत्री रेवंत रेड्डी और आंध्र प्रदेश के मुख्यमंत्री चंद्रबाबू नायडू के अलावा पश्चिम बंगाल की मुख्यमंत्री ममता बनर्जी और पंजाब के मुख्यमंत्री भगवंत मान शामिल हैं। एमके स्टालिन ने बाकी सभी सात राज्यों के मुख्यमंत्रियों को लेटर लिखकर परिसीमन का विरोध करने की अपील की थी। इसके अलावा एमके स्टालिन ने सीपीआई(एम), बीजेपी, कांग्रेस, टीडीपी, वाईएसआरसीपी, बीजेडी और अकाली दल के अलावा देश के सभी राजनीतिक

पार्टियों प्रमुखों को लिखा था कि ''यह मुद्दा व्यक्तिगत राज्य की चिंताओं से परे है और संघीय सिद्धांत की मूल धारणा पर प्रहार करता है। ये हमारे राज्यों (दक्षिणी राज्यों और कम आबादी वाले राज्यों) के विकास के लिए उचित संसाधनों

को सुरक्षित करने और महत्वपूर्ण नीतियों को प्रभावित करने की क्षमता सुनिश्चित करने के बारे में है। मुख्यमंत्रियों को लेटर लिखने के अलावा उन्होंने सोशल मीडिया पर लिखा है कि 'केंद्र सरकार की परिसीमन योजना संघवाद पर एक जबरदस्त हमला है। हम इस लोकतांत्रिक अन्याय की अनुमति नहीं देंगे।''

एमके स्टालिन ने इस मामले पर पिछले महीने 22 मार्च को चेन्नई में मीटिंग की थी जिसकी अध्यक्षता तमिलनाडु के मुख्यमंत्री और द्रविड़ मुनेत्र कड़गम (डीएमके) अध्यक्ष स्टालिन के नेतृत्व में जेएसी ने एक प्रस्ताव पारित कर किसी भी परिसीमन प्रक्रिया में पारदर्शिता की मांग की तथा संसदीय निर्वाचन क्षेत्रों पर मौजूदा रोक को 25 वर्ष तक बढ़ाने का आह्वान किया। प्रस्ताव में कहा गया है, श्लोकतंत्र की विषयवस्तु और चरित्र में सुधार के लिए केंद्र सरकार द्वारा किया जाने वाला कोई भी परिसीमन कार्य पारदर्शी तरीके से किया जाना चाहिए, जिससे सभी राज्यों के राजनीतिक दलों, राज्य सरकारों और अन्य हितधारकों को विचार-विमर्श, चर्चा और योगदान करने का अवसर मिल सके।श मीटिंग में स्टालिन ने कांग्रेस, टीडीपी, बीजेडी, वाईएसआरसीपी, अकाली दल और यहां तक कि बीजेपी के अलावा बाकी सभी पार्टियों को कहा है कि परिसीमन प्रधानमंत्री मोदी और भाजपा ही नहीं, बल्कि संघ का भी ड्रीम प्रोजेक्ट है और इस प्रोजेक्ट को रोकने में अगर विपक्षी पार्टियां कामयाब हो जाती हैं, तो प्रधानमंत्री मोदी, गृहमंत्री अमित शाह, तमाम भाजपा नेताओं और संघ के मंसूबों पर पानी फिर सकता है यानि साल 2029 में एक बार फिर से भाजपा के नेतृत्व वाले एनडीए गठबंधन की सरकार बनने से रोका जा सकता है। हालांकि भाजपा का रथ रोकने के लिए सिर्फ परिसीमन मामले में ही उसे मात देना काफी नहीं है, लेकिन इससे भाजपा और संघ, खास तौर पर प्रधानमंत्री मोदी, गृह मंत्री अमित शाह और दूसरे बड़े नेताओं का अगले 50 साल तक सत्ता में रहने का ख्वाब टूटकर बिखर सकता है।

ऐसा नहीं है कि केंद्र की मोदी सरकार परिसीमन की कोशिश या तैयारी कोई पहली बार कर रही है, उसने नई संसद में जो सीटें बढ़वाकर बनवाई हैं, वो इसी रणनीति का एक हिस्सा है और इसकी चर्चा पिछले चार-पांच साल से देश में चल रही है, लेकिन अब इस दिशा में मोदी सरकार काम भी कर रही है, जिसके तहत लोकसभा की 543 सीटों की जगह तकरीबन 848 सीटें तक करने की बात सामने आ रही है। और इसमें भाजपा को फायदा इसलिए नजर आ रहा है क्योंकि जिन राज्यों की आबादी पिछले 4-5 दशक में तेजी से बढ़ी है, उनमें खास तौर पर उत्तर भारत के राज्य हैं, जिनमें पंजाब, हरियाणा, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, उत्तराखंड, मध्य प्रदेश छत्तीसगढ़, बिहार झारखंड, ओडिशा और कुछ अन्य राज्य हैं। इसके अलावा पश्चिम बंगाल, महाराष्ट्र, हिमाचल जैसे राज्य हैं। अब परिसीमन से होगा ये कि जिन राज्यों में जितनी जनसंख्या है, उसके हिसाब से लोकसभा और राज्यसभा सीटें बढ़ेंगी। साथ ही विधानसभा सीटें भी बढ़ेंगी। बीजेपी सोचती है कि गुजरात उसके कब्जे में है ही और बाकी राज्यों में सीटें बढ़ाने से उसे फायदा होगा। जिससे इन्हीं राज्यों के दम पर वो केंद्र की सत्ता में आसानी से पहुंचती रहेगी। इसमें उदाहरण के तौर पर अगर हम देखें, तो

उत्तर प्रदेश में 80 की जगह 128 लोकसभा सीटें होने की उम्मीद है, और बिहार में 40 की जगह 70-72 और इसी प्रकार से दूसरे उत्तरी राज्यों में सीटें तकरीबन डेढ़ से दोगुनी तक हो जाएंगी। लेकिन दक्षिणी राज्यों में या तो न के बराबर सीटें बढ़ेंगी या फिर कम भी हो सकती हैं। भाजपा ये अच्छी तरह जानती है कि दक्षिणी राज्यों में उसकी दाल आसानी से नहीं गलेगी, इसलिए कुछ ऐसा कर दो कि उत्तर भारत के राज्यों के अलावा कुछ अन्य राज्यों में ही उसे केंद्र में सरकार बनाने लायक बहुमत मिल जाए और उसके लिए उसके पास परिसीमन करके लोकसभा की सीटें बढ़ाने से अच्छा दूसरा कोई रास्ता नहीं है। लेकिन इस परिसीमन से पहले जो देश की जनगणना होनी चाहिए केंद्र की मोदी सरकार उसे कराने को राजी नहीं है, क्योंकि अगर देश में जनगणना हुई, तो जिसकी जितनी संख्या भारी, उसकी उनती हिस्सेदारी के हिसाब से लोग नौकरियों और राजनीति में हिस्सेदारी की मांग करने लगेंगे, और इस प्रकार न सिर्फ एक नया मुद्दा देश में खड़ा हो जाएगा, बल्कि इस मुद्दे के उठते ही केंद्र की मोदी सरकार, बीजेपी और संघ के लिए एक नई चुनौती खड़ी हो जाएगी, जिससे निपट पाना उसके लिए और बड़ी मुसीबत मोल लेने जैसा साबित होगा।

बहरहाल, ये मामला काफी बड़ा है, जिस पर कम शब्दों में पूरी बात कह पाना मुमकिन नहीं है। लेकिन अगर हम परिसीमन की बात करें, तो ये करीब देश में पांच दशकों से ज्यादा समय बीत जाने के बावजूद नही हुआ है, जिसकी लंबी कहानी है। क्योंकि परिसीमन पर न सिर्फ इंदिरा गांधी ने रोक लगाई थी, बल्कि भाजपा के ही नेता और प्रधानमंत्री रहे अटल बिहारी वाजपेई ने भी परिसीमन को उचित नहीं माना। देश में पहला परिसीमन आजाद हिंदुस्तान में पहली सरकार गठन होने के लिए साल 1951 में किया गया था। उसके 10 साल बाद यानि साल 1963 में जनगणना हुई। और परिसीमन हुआ, उसके 10 साल बाद फिर यानि साल 1973 में देश में जनगणना के बाद परिसीमन हुआ था। पहले परिसीमन के दौरान लोकसभा की सीटें 494 थीं, दूसरे परिसमीन में इन्हें बढ़ाकर 522 कर दिया गया और तीसरे परिसीमन में लोकसभा की ये सीटें 573 की गईं, इसके बाद से न तो देश में कोई परिसीमन हुआ और न लोकसभा की सीटें ही बढ़ीं। हालांकि जनगणना हुई, लेकिन साल 2011 के बाद से उस पर भी ब्रेक लग गया, जिसके लिए केंद्र की मोदी सरकार ही जिम्मेदार है, जो तकरबीन 14 साल बाद भी जनगणना नहीं कराना चाहती है। जब साल 2001 में अटल बिहारी वाजपेई के नेतृत्व वाली एनडीए सरकार केंद्र में बनी, तो उसने तकरीबन परिसीमन को 50 साल से ज्यादा समय यानी साल 2056 तक के लिए इसे टालने की बात कहकर रोक दिया था। लेकिन अब केंद्र की मोदी सरकार को जब केंद्र और राज्यों की सत्ता की सीढ़ियां चढ़ने के लिए कोई ठोस तरीका नहीं सूझ रहा है, तो वो सीटें बढ़ाकर अपनी आगे की राह आसान करना चाह रही है, जिसका विरोध उठना लाजिमी है। राजनीति के कुछ जानकार ये भी मान रहे हैं कि परिसीमन की चाल प्रधानमंत्री मोदी और उनकी सरकार या कहे कि बीजेपी को महंगी भी पड़ सकती है।

डॉ घनश्याम बादल
वरिष्ठ विश्लेषक

सोनिया के लेख के निहितार्थ

आजाद तो हम 1947 में हो गए थे और 26 जनवरी 1950 को एक गणतांत्रिक राष्ट्र भी बन गए लेकिन शैक्षिक दृष्टि से देखे तो अगले 18 साल तक हम बिना किसी शिक्षा नीति के ही चलते रहे यानी लॉर्ड मैकाले के नियम कानून ही 1968 तक ढोते रहे।

पहली राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1968 में डॉ. के. नागराजा समिति की सिफारिशों के आधार पर आई । फिर 18 साल यही नीति चलती रही और 1986 में राजीव गांधी सरकार नई शिक्षा नीति लेकर आई 1992 में नरसिम्हा राव सरकार ने इसमें संशोधन किए ।34 वर्षों के बाद नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति 29 जुलाई 2020 को नरेंद्र मोदी सरकार द्वारा शिक्षा प्रणाली में बड़े बदलाव के लक्ष्य के साथ लाई गई।

वैसे 1986 के शिक्षा नीति के प्रपत्रों को देखा जाए तो नई नीति उनसे बहुत ज्यादा अलग नहीं है, फिर भी बदलती हुई आवश्यकताओं एवं परिवेश के अनुसार कई नए विचार इसमें दिखाई दिए । तत्कालीन शिक्षा मंत्री रमेश पोखरियाल निशंक के नेतृत्व में बनी शिक्षा नीति की जहां सरकारी तंत्र ने भरपूर प्रशंसा की, वहीं विपक्ष ने इसमें छेद ही छेद ढूंढने का काम किया हालांकि दोनों ही पक्ष अतिवाद के शिकार रहे।

एन सी एफ 2020 पुस्तकीय ज्ञान की अपेक्षा हस्त कौशल एवं दक्षता को अधिक महत्व देता है, साथ ही साथ बच्चों के विद्यालय में ही तकनीकी प्रशिक्षण पर भी जोर है। इसमें सरकारी स्तर पर पहली बार पूर्व प्राथमिक स्तर की शिक्षा की भी व्यवस्था की गई है हालांकि यह

दूसरा मत

हार्दिक शुभकामनाएं

पढ़ें और पढ़ाएं दूसरा मत

एक शुभचिंतक, दिल्ली

व्यवस्था निजी क्षेत्र में बहुत पहले से चल रही है।

इस शिक्षा नीति पर को लेकर कई बिंदुओं पर विवाद पहले से ही मौजूद हैं जिनमें मुख्य रूप से भाषा नीति मुख्य है। इस नीति में त्रिभाषा फामूर्ला लागू करने की बात कही गई है जिसमें हिंदी, अंग्रेजी और एक क्षेत्रीय भाषा को पढ़ाना शामिल है। दक्षिण भारत और गैर-हिंदी भाषी

राज्यों ने इसे हिंदी थोपने का प्रयास बताया है हालांकि सरकार ने स्पष्ट किया है कि किसी भाषा को अनिवार्य नहीं बनाया जाएगा और राज्यों को भाषा चयन की स्वतंत्रता होगी।

मातृभाषा में प्रारंभिक शिक्षा भी विवाद का विषय है । नई नीति के अनुसार कक्षा 5 (या यथासंभव कक्षा 8) तक मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा में शिक्षा का प्रावधान है। यह ग्रामीण क्षेत्रों के लिए लाभकारी हो सकता है लेकिन अंग्रेजी माध्यम की बढ़ती माँग के कारण यह गैर-व्यावहारिक भी है। इस बारे में मुख्य चिंता यह है कि इससे निजी विद्यालयों और उच्च शिक्षा में अंग्रेजी की तैयारी प्रभावित हो सकती है।

शिक्षा नीति 2020 में पुरानी 10+2 शिक्षा प्रणाली को बदल कर 5+3+3+4 संरचना लागू करने का निर्णय लिया गया जिसमें फाउंडेशनल स्टेज (3-8 वर्ष), प्रिपरेटरी स्टेज (8-11 वर्ष), मिडिल स्टेज (11-14 वर्ष), और से-केंडरी स्टेज (14-18 वर्ष) शामिल है। इस नीति के आलोचकों का मानना है कि इससे स्कूलों में अतिरिक्त संरचनात्मक बदलाव की आवश्यकता होगी जो बहुत चुनौतीपूर्ण है।

इस शिक्षा नीति में बोर्ड परीक्षाओं को कम महत्वपूर्ण बनाने और ₹हाई-स्टेकर₹ परीक्षा न रहने देने की बात कही गई जिससे कुछ विशेषज्ञों ने चिंता जताई कि इससे छात्रों की प्रतिस्पर्धात्मकता और उच्च शिक्षा में चयन प्रक्रिया प्रभावित हो सकती है।

उच्च शिक्षा में विदेशी विश्वविद्यालयों को अनुमति देने पर भी कुछ लोगों को आशंका है कि इससे भारतीय संस्थानों को नुकसान होगा और शिक्षा का व्यवसायीकरण बढ़ेगा। नई नीति में छात्रों को किसी भी समय कोर्स छोड़ने और बाद में फिर से जॉइन करने की सुविधा दी गई है। शिक्षाविदों का मानना है कि इससे शिक्षा के प्रति गंभीरता कम होगी और ड्रॉपआउट रेट बढ़ सकता है।उच्च शिक्षा संस्थानों को अधिक स्वायत्तता देने और निजी भागीदारी बढ़ाने पर भी आशंका उठी है कि इससे शिक्षा का निजीकरण बढ़ेगा और उच्च शिक्षा और भी महंगी हो जाएगी।

हालांकि शिक्षा नीति 2020 में कई सका-रात्मक बदलाव लाने की कोशिश भी की गई है लेकिन इसके कुछ प्रावधानों को लेकर विरोध अब भी जारी है और अब तो यह विरोध राजनीतिक शीर्ष पर पहुंच गया है. इसी विरोधाभास को रेखांकित करने के लिए कांग्रेस की शीर्ष नेता सोनिया गांधी ने दैनिक हिंदू में अपने लेख में शिक्षा नीति को लेकर सरकार पर गंभीर आरोप लगाए हैं । सोनिया गांधी ने अपने

" राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद (NCERT) की किताबों से मुगल काल और महात्मा गांधी की हत्या से जुड़े हिस्सों को सिलेबस से निकाला गया।

सोनिया गांधी

लेख में इसे जमीनी हकीकत से दूर बताते हुए इस नीति में सार्वजनिक परामर्श और व्यापक विचार-विमर्श का अभाव भी बताया है। सोनिया नई शिक्षा नीति में वंचित और हाशिए पर खड़े वर्गों की शिक्षा को लेकर ठोस योजना और सामाजिक न्याय और समानता के मूल्यों की अवहेलना का आरोप भी लग रही हैं। उन के अनुसार यह नीति निजीकरण को बढ़ावा देगी जिससे आम नागरिकों को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्राप्त करने में कठिनाई होगी।

शिक्षा नीति 2020 में प्राथमिक शिक्षा मातृभाषा में देने पर सोनिया गांधी का कहना है कि मातृभाषा में शिक्षा देना महत्वपूर्ण तो है लेकिन यह सुनिश्चित करना भी आवश्यक है कि सभी भाषाओं के छात्रों को समान अवसर मिलें और वे वैश्विक प्रतिस्पर्धा के लिए तैयार हों। शिक्षा नीति के तहत विश्वविद्यालयों और शिक्षण संस्थानों को दी जाने वाली स्वायत्तता के संदर्भ में भी सोनिया की चिंता है कि इससे शिक्षा का केंद्रीकरण हो सकता है, जिससे राज्यों की भूमिका सीमित हो जाएगी।

सोनिया गांधी ने शिक्षा के क्षेत्र में बजट के समुचित आवंटन और शिक्षकों की स्थिति को मजबूत करने की मांग के साथ शिक्षकों की भर्ती, प्रशिक्षण और वेतनमान पर विशेष ध्यान की जरूरत भी बताई है । उन्होंने इस नीति को अधिक समावेशी, न्यायसंगत और जनहितैषी बनाने की अपील की है ताकि सभी वर्गों के छात्रों को समान अवसर मिल सके।

एक नजर से देखने पर सोनिया गांधी की कुछ चिंताएं जायज नजर आती हैं है लेकिन दूसरा यथार्थ यह भी है कि उनकी मंशा साफ तौर पर शिक्षा के मुद्दे पर मोदी सरकार को घेरने की है । कांग्रेस का इतिहास रहा है कि शिक्षा को सदैव उसने उपेक्षित ही रखा है चाहे बजट का मामला हो या शिक्षा नीति बनाने का अन्यथा जिस तरह हर 10 वर्ष में जनगणना होती है या पे कमीशन बैठता है, वैसे ही शिक्षा नीति में भी बदलाव की जरूरत होती है लेकिन अपने शासनकाल में कांग्रेस ने ऐसा कुछ भी नहीं किया।

यदि वर्तमान शिक्षा नीति को गौर से देखा जाए तो यह 1986 की शिक्षा नीति से कोई बहुत अधिक अलग नहीं है लेकिन तब से 2020 तक सोनिया गांधी को उन शिक्षा नीतियों में कुछ भी गलत नजर नहीं आया।

इसमें तो दो राय नहीं कि सोनिया गांधी का यह लेख राजनीतिक उद्देश्य हासिल करने का उपक्रम मात्र है लेकिन साथ ही साथ यह भी सच है कि समय के साथ शिक्षा नीति में बदलाव की जरूरत तो होगी ही और वर्तमान शिक्षा नीति को भी हम एकदम पूर्ण या समग्र नहीं मान सकते।

(लेखक देश के शीर्ष शिक्षा संस्थान में लंबे समय तक शिक्षक रहे हैं)

सनातन पर प्रहार

डा हरिकृष्ण बड़ोदिया
वरिष्ठ लेखक एवं स्तंभकार

तमिलनाडु की राजनीति न केवल एकांगी है बल्कि यहां के डीएमके नेताओं की सोच संकुचित और सनातन विरोधी है। यह एक सच्चाई है कि हिंदू धार्मिक संस्कृति और धरोहरों की दृष्टि से दक्षिण भारत अत्यंत समृद्ध है। यहां के हिंदू मंदिर और उनकी स्थापत्य कला विश्व प्रसिद्ध है। तमिलनाडु में हिंदुओं की 89 प्रतिशत आबादी है लेकिन यहां के राजनीतिक परिवेश में न केवल भाषाई विवाद है बल्कि हिंदू सनातनियों के प्रति नफरत जग जाहिर है। आज जब हिंदी का विस्तार और प्रसार वैश्विक स्तर पर जारी है तब भी तमिलनाडु में हिंदी भाषा के प्रति हिकारत और नफरत आश्चर्य पैदा करता है। यहां हिंदी भाषा का विरोध 1937 से प्रारंभ हुआ जो आज भी जारी है। सच्चाई यह है कि इस राज्य के प्रभावशाली राजनीतिक परिवार अपनी राजनीतिक महत्वाकांक्षाओं की पूर्ति के लिए हिंदी भाषा का विरोध करते आ रहे हैं। 1965 में हिंदी विरोधी आंदोलन ने राज्य भर में दंगों की शक्ल अख्तियार की थी जो दो महीनो तक जारी रही थी जिसमें हिंसा, आगजनी, लूटपाट और जनता के बीच संघर्ष हुआ था। इसमें दो पुलिसकर्मियों सहित लगभग 70 मौतें हुई थी। तमिलनाडु के राजनेताओं ने हिंदी के प्रति नफरत को एक स्थाई भाव बना लिया है। 65 साल बीत जाने के बाद भी तमिलनाडु में भाषाई विवाद कभी कम नहीं हुआ। यही कारण है कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के त्रिभाषा फामूर्ले के विरोध में एमके स्टालिन सरकार अपने राजनीतिक लाभ के लिए खुलकर सामने खड़ी हो गई है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति के अनुसार प्रत्येक राज्य को त्रिभाषा शिक्षा योजना लागू करना चाहिए किंतु राज्य सरकार ने इसे यह कहकर कि केंद्र हिंदी भाषा को तमिलनाडु पर थोपना चाहती है विरोध करना शुरू कर दिया। जबकि राष्ट्रीय शिक्षा नीति के अनुसार तीन भाषाओं में दो भारतीय मूल की भाषाएं होना चाहिए। केंद्र ने कभी यह नहीं कहा कि हिंदी अनिवार्य भाषा के रूप में पढ़ाई जाए लेकिन तमिलनाडु सरकार ने त्रिभाषा फामूर्ले के कारण राष्ट्रीय शिक्षा नीति लागू करने से इंकार कर दिया तो केंद्र ने शिक्षा संबंधित 573 करोड़ का फंड देने से इनकार कर दिया जिसकी वजह से सरकार को वित्तीय दबाव का सामना करना पड़ रहा है।

सच्चाई यह है कि तमिलनाडु में अगले वर्ष विधानसभा चुनाव हैं और राज्य सरकार भ्रष्टाचार के आरोपों से घिरी हुई है। चूंकि डीएमके सरकार को जनता का विरोध झेलना पड़ सकता है तथा उसके पास मतदाताओं को बताने के लिए कोई उपलब्धियां नहीं है इसी वजह से एक बार फिर स्टालिन सरकार ने भाषाई मुद्दा उठाकर जनता को भ्रमित करने की कोशिश की है। सरकार को लगता है कि भाषाई जिन को जगा कर वह अपनी जीत की इबारत लिख सकती है। किंतु आज की स्थिति में तमिल लोगों के सामने भाषा विरोध उतना प्रभावी नहीं है जितना कि सनातन का विरोध है। स्टालिन सरकार में मंत्री एमके स्टालिन के पुत्र और मंत्री उदयनिधि स्टालिन ने 2023 में जिस तरह सनातन का विरोध किया वह ना केवल चौंकाने वाला था बल्कि देश की 80 फीसदी हिंदू आबादी के लिए आपत्तिजनक था। कितनी विडंबना है कि जिस राज्य में हिंदू धार्मिक संस्कृति के प्रतीक मंदिर और स्थापत्य कला अपने वैभव के लिए विश्व भर में जाने जाते है तथा जो विश्व की धरोहर हैं उस राज्य में हिंदू सनातनियों का अपमान डीएमके नेताओं का धर्म बन गया है। 2014 के बाद जब से देश में केंद्र में नरेंद्र मोदी की सरकार आई है तब से हिंदुओं में जो आत्म गौरव का भाव जागृत हुआ है उसने तथाकथित धर्मनिरपेक्षता वादियों के वर्चस्व को परास्त करने का काम किया है जिससे समूचे सनातनी, सनातन विरोधियों के निशाने पर आ गए हैं। डीएमके नेता उदयनिधि स्टालिन ने 2 सितंबर 2023 को तमिलनाडु में आयोजित एक कार्यक्रम में सनातन धर्म को कई सामाजिक बुराइयों की जड़ बताते हुए इसे खत्म करने की बात कही थी। उन्होंने कहा था कि सनातन धर्म लोगों को धर्म के नाम पर बांटने का काम करता है इसे खत्म करना चाहिए जिससे समाज में मानवता और समानता का प्रसार हो सके।

उन्होंने सनातन को डेंगू, मलेरिया और कोरोना की संज्ञा देते हुए कहा था कि जिस तरह हम इन बीमारियों के मच्छरों को खत्म करते हैं उसी तरह सनातन को भी खत्म कर देना चाहिए। इसी विचार को आगे बढ़ाते हुए ए राजा ने सनातन को एड्स की संज्ञा दी थी। असल में जब से तमिलनाडु में भाजपा नेता और पार्टी अध्यक्ष के अन्नामलाई ने एन मन एन मक्कल (अपनी धरती अपने लोग) पद यात्रा कर राज्य भर में हिंदुत्व का अलख जगाया है तब से द्रमुक नेता विचलित हुए दिखाई दे रहे हैं। यह पहला मौका था जब अन्नामलाई ने हिंदुओं को एकजुट करने और हिन्दू विरोधी विचारक तथा राजनीतिज्ञ पेरियार का विरोध करने का काम किया। अन्नामलाई की लोकप्रियता ने भाजपा की तमिलनाडु में पहचान बनाने में खासी मदद की। यही कारण था कि 2024 के लोकसभा चुनाव में भाजपा को भले ही एक भी सीट न मिली हो या अन्नामलाई खुद चुनाव हार गए हों लेकिन उसने 11.24 प्रतिशत वोट हासिल कर अपनी स्थिति मजबूत की थी जबकि 2019 में उसे मात्र 3.6 प्रतिशत वोट ही मिले थे। निश्चित ही यह सफलता राज्य के द्रमुक नेताओं के लिए चिंता की बात बन गई। यही कारण है कि एक बार फिर द्रमुक नेता सनातन पर प्रहार करते हुए दिखाई दे रहे हैं। जिस द्रुत गति से अन्नामलाई राज्य में भाजपा के पैर जमाने में प्रयासरत हैं उसी गति से डीएमके नेता सनातन विरोधी बयान देकर जनमानस को भाजपा के विरोध में खड़ा करने के लिए प्रयत्नशील हैं। यही कारण है कि अभी-अभी तमिलनाडु सरकार के जल संसाधन मंत्री दुरई मुरूगन ने उत्तर भारत की संस्कृति को निशाना बनाते हुए फिर एक आपत्तिजनक बयान देकर उत्तर दक्षिण में विभाजन की रेखा खींचने का काम किया। दुरई मुरूगन ने कहा कि उत्तर भारत में महिलाएं 5 या 10 पुरुषों से शादी कर सकती हैं। यही नहीं उन्होंने यह भी कहा यदि किसी ने तमिल संस्कृति का अपमान किया तो हम उसकी जीभ काट लेंगे। उन्होंने महाभारत की द्रोपदी का संदर्भ देते हुए उत्तर भारत के जनमानस को विचलित करने का काम किया। असल में वे नई जनसंख्या गणना के आधार पर सीटों के परिसीमन पर अपनी प्रतिक्रिया दे रहे थे। केंद्रीय शिक्षा मंत्री धर्मेंद्र प्रधान की डीएमके पर उस टिप्पणी पर जिसमें उन्होंने कहा था कि तमिलनाडु में सत्ताधारी दल बेईमान और असभ्य है जो छात्रों के साथ भविष्य की कीमत पर राजनीति कर रही है पर दुरई मुरूगन ने प्रतिक्रिया देते हुए सनातन संस्कृति पर कटाक्ष किया कि बदबूदार संस्कृति से आते हुए आप हमें असभ्य कह रहे हैं हम आपकी जीभ काट लेंगे। सच्चाई यह है कि जिस तीव्र गति से तमिलनाडु में सनातनियों का डीएमके के विरोध में ध्रुवीकरण होता दिखाई दे रहा है उससे उसके नेता बहुत विचलित हैं। चूंकि 2026 में विधानसभा चुनाव होने हैं। ऐसे में वे सनातनियों को संगठित होने से रोकने के लिए ऐसे ऊलजलूल बयान देते दिखाई दे रहे हैं। मुरूगन जैसे नेता यह भूल जाते हैं कि उनकी पार्टी के सर्वकालिक प्रसिद्ध नेता एम करुणानिधि ने खुद तीन शादियां की थीं। यही नहीं वह यह भी भूल जाते हैं कि एमके स्टालिन की धर्मपत्नी और उदयनिधि की माताजी स्वयं सनातनी परंपराओं को मानते हुए मंदिरों में पूजा अर्चना करती हैं। लेकिन डीएम के नेताओं का सनातन विरोध एक मजबूरी है क्योंकि वे अपने जनाधार को खिसकता देख रहे हैं। निश्चित ही 2026 विधानसभा चुनाव में यदि भाजपा एआईएडीएमके से गठबंधन करती है तो यह डीएमके की हार की इबादत लिख सकती है।

(लेखक रतलाम में समाजशास्त्र के सेवा निवृत प्राध्यापक हैं)

आखिर कहां नहीं है प्लास्टिक?

सुनील कुमार महला

प्लास्टिक मनुष्य से लेकर धरती के समस्त जीवों, हमारे पर्यावरण और पारिस्थितिकी के लिए एक प्रकार से जहर है। आज देश-दुनिया को भले ही प्लास्टिक ने कितनी ही सहूलियतें प्रदान क्यों न की हो, लेकिन यह मनुष्य, जीवों, वनस्पतियों के साथ-साथ संपूर्ण धरती के पर्यावरण के लिए विनाश ला रहा है। पाठकों को जानकारी देना चाहूंगा कि हाल ही में भारत के केरल में हुए एक हालिया अध्ययन में बोतलबंद पानी में प्लास्टिक माइक्रोबीड्स की मौजूदगी का खुलासा हुआ है।यह पहली बार नहीं है जब बोतलबंद पानी में प्लास्टिक के महीन कण मिले हों। इससे पहले भी बोतलबंद पानी में प्लास्टिक की मौजूदगी के अनेक खुलासे हो चुके हैं। कुछ समय पहले नमक व चीनी तक के नमूनों में प्लास्टिक के महीन कणों की मौजूदगी के संबंध में एक अध्ययन सामने आया था। हाल ही में जो अध्ययन सामने आया है, उससे पता चलता है कि 10 प्रमुख ब्रांडों के बोतलबंद पानी में प्लास्टिक के माइक्रोबीड्स पाए गए हैं। इस स्टडी से सामने आया है कि औसतन प्रति लीटर तीन से दस माइक्रोबीड्स थे। फाइबर, टुकड़े, फिल्म और छर्रे सहित विभिन्न प्रकार के प्लास्टिक पाए गए, जो कि चिंताजनक है। चिंताजनक इसलिए क्यों कि आज भारत में बोतलबंद पानी का व्यापार लगातार बढ़ रहा है और बच्चों से लेकर बूढ़े, महिलाएं सभी बोतलबंद पानी का धड़ल्ले से उपयोग करते नजर आते हैं। आंकड़े बताते हैं कि बोतलबंद पानी के माध्यम से हर साल औसतन 153.3 प्लास्टिक कण उपभोक्ता के शरीर में प्रवेश करते हैं। पाठकों को बताता चलूं कि केरल में बिकने वाले बोतलबंद पानी पर केंद्रित यह अध्ययन अंतरराष्ट्रीय वैज्ञानिक पत्रिका स्प्रिंगर नेचर के डिस्कवर एनवायरनमेंट में प्रकाशित हुआ था। अध्ययन ने नमूनों में आठ अलग-अलग प्रकार के पॉलीमर कणों की उपस्थिति की पुष्टि की है, जिसमें फाइबर सबसे आम थे, जो 58.928% थे। कुल कणों का लगभग 35.714% लाल रंग का था। विश्लेषण से पता चलता है कि नमूनों में पाए गए रेशे अनुपचारित जल स्रोतों से उत्पन्न हो सकते हैं, जबकि अन्य जल शोधन में उपयोग किए जाने वाले घटकों या पैकेजिंग के लिए उपयोग की जाने वाली बोतलों से मिश्रित हो सकते हैं। बहरहाल, कहना गलत नहीं होगा कि केरल में बोतलबंद पानी पर हुआ ताजा अध्ययन हो या चीन, अमेरिका और जर्मनी के शोधकताओं की रिपोर्ट, सब यही बताते हैं कि माइक्रोप्लास्टिक मनुष्य के जीवन और पर्यावरण, दोनों के लिए बड़ा खतरा बन गया है। कहना गलत नहीं होगा कि यदि समय रहते इस ओर ध्यान नहीं दिया गया और अगर गंभीरता नहीं बरती गई, तो प्लास्टिक मानवजाति ही नहीं अपितु संपूर्ण जीवों व धरती के लिए एक बहुत बड़ा व गंभीर खतरा बन जाएगा। आज प्लास्टिक का जिम्मेदार उपयोग नहीं किया जा रहा है और न ही इसकी उचित रिसाइक्लिंग (पुनर्चक्रण) पर ही किसी का ध्यान है। आज हमारे घरों,आफिसेज से लेकर हर जगह प्लास्टिक का बोलबाला है। कोई भी जगह ऐसी नहीं है, जहां प्लास्टिक का किसी न किसी रूप में आविर्भाव नहीं हो। प्लास्टिक हमारी जिंदगी का बहुत ही अहम्, महत्वपूर्ण व जरूरी हिस्सा बन चुका है। हमारे शेविंग रेजर से लेकर हमारे टुथब्रश, नहाने की बाल्टी, मग, हमारे चश्मे, हमारे पेन(कलम), हमारे भोजन की थाली,प्लेट, कटोरी तक सब प्लास्टिक का ही है। संक्षेप में कहें तो हम माइक्रोप्लास्टिक्स का सामना हर जगह करते हैं। मसलन, कचरा, धूल, कपड़े, सौंदर्य प्रसाधन, सफाई उत्पाद, बारिश, समुद्री भोजन, उपज, नमक, आदि में।आज मिट्टी, पानी, भोजन, हवा और मानव शरीर सहित सभी जीवित जीवों में माइक्रोप्लास्टिक कण पाए गए हैं। पाठकों को जानकारी देना चाहूंगा कि माइक्रोप्लास्टिक, प्लास्टिक के टूटने से बनते हैं और ये हवा, पानी, और जमीन में भी पाए जाते हैं। वास्तव में ये हमारे शरीर में सांस लेने और खाने के जरिए पहुंचते हैं। इतना ही नहीं, ये हमारे रक्त, फेफड़े, और प्लेसेंटा में भी पाए गए हैं। सच तो यह है कि ये हमारे शरीर के लगभग हर हिस्से में पाए जाते हैं, क्यों कि आज हम बेतहाशा रूप से हर चीज में प्लास्टिक का उपयोग कर रहे हैं। आज हम चाय , कोफी तक प्लास्टिक के डिस्पोजेबल कप्स में पीते हैं। बहरहाल, पाठकों को बताता चलूं कि अध्ययन बताते हैं कि औसतन, मनुष्य प्रतिदिन 240 कणों को साँस के जरिए अंदर लेता है। यूएनईपी के अनुसार, हर साल 23 मिलियन टन प्लास्टिक कचरा दुनिया की जल प्रणालियों में लीक हो जाता है। हाल ही में जो शोध सामने आया है वह बोतलबंद पानी के उत्पादन में बेहतर गुणवत्ता नियंत्रण प्रक्रियाओं की आवश्यकता पर गंभीरता से प्रकाश डालता है। कहना गलत नहीं होगा कि यह प्लास्टिक के उपयोग को कम करने और यह सुनिश्चित करने की आवश्यकता पर भी जोर देता है कि उपयोग के बाद इसे(प्लास्टिक को) वैज्ञानिक रूप से संसाधित किया जाए। बहरहाल, यहां यह उल्लेखनीय है कि कुछ समय पहले साइंस एडवांस में प्रकाशित एक

अध्ययन ने भी बताया था कि प्लास्टिक के नैनो कण इन्सान के दिमाग में प्रवेश कर रहे हैं। विशेषज्ञ बताते हैं कि माइक्रोप्लास्टिक के मानव स्वास्थ्य पर बहुत गंभीर प्रभाव पड़ते हैं। मसलन,ये सूजन, जीनोटॉक्सिसिटी, ऑक्सीडेटिव तनाव, एपोप्टोसिस, और नेक्रोसिस जैसी समस्याएं पैदा कर सकते हैं। इतना ही नहीं,ये कैंसर, हृदय रोग, सूजन आंत्र रोग, मधुमेह, रुमेटी गठिया, और ऑटो-इम्यून स्थिति जैसी बीमारियों से जुड़े हो सकते हैं। यहां तक कि ये प्रजनन संबंधी समस्याएं पैदा कर सकते हैं। पाठकों को बताता चलूं कि माइक्रोप्लास्टिक कण पौधों की प्रकाश संश्लेषण प्रक्रिया को भी बाधित कर रहे हैं, जिससे गेहूं, धान और मक्का जैसी प्रमुख फसलों की पैदावार में सालाना 14 फीसदी तक की गिरावट आ सकती है। प्रकाश संश्लेषण दरअसल, पौधों के भोजन बनाने की प्रक्रिया है, जिसमें वे श्वसन के विपरीत, कार्बन डाई ऑक्साइड ग्रहण करते हैं, और वातावरण में ऑक्सीजन छोड़ते हैं। लिहाजा यह प्रक्रिया हमारे ग्रह पर कार्बन डाई ऑक्साइड के स्तर को नियंत्रित रखने के लिए भी जरूरी है। प्लास्टिक एक ऐसी चीज है जो करोड़ों सालों तक भी नष्ट नहीं होती है। कुछ लोग यह समझते हैं कि प्लास्टिक को जलाने से यह खत्म हो जाता है, लेकिन यह गलत है। प्लास्टिक को जलाना तो और भी अधिक खतरनाक है। गौरतलब है कि प्लास्टिक को जलाने से डाइऑक्सिन, फ़्यूरान, और पीसीबी जैसे हानिकारक रसायन निकलते हैं।बहरहाल, यहां यह भी उल्लेखनीय है कि प्लास्टिक के उत्पादन और विनाश से ऐसे कण और गैसें पैदा होती हैं, जो जलवायु परिवर्तन(क्लाइमेट चेंज) में योगदान करती हैं, और पर्यावरण में विघटित होने के लिए छोड़े गए प्लास्टिक से ग्रीनहाउस गैसें निकलती हैं। ग्रीन हाउस गैसों की बढ़ोतरी से धरती के तापमान में बढ़ोत्तरी होती है और हमारी धरती की पारिस्थितिकी गड़बड़ा जाती है। अध्ययन बताते हैं कि मा-इक्रोप्लास्टिक समुद्री सूक्ष्मजीवों की कार्बन डाइऑक्साइड को अलग करने और ऑक्सीजन का उत्पादन करने की वैश्विक रूप से महत्वपूर्ण भूमिकाओं को बाधित करते हैं। ये कमी हमारे और हमारे नीले ग्रह(धरती) के स्वास्थ्य को और खतरे में डालती है। आज हमारी धरती निरंतर प्लास्टिक की जद में आती चली जा रही है। प्लास्टिक के आंकड़े जानकर हर किसी को घोर आश्चर्य हो सकता है। मसलन,दुनिया भर में करीब 903 करोड़ टन प्लास्टिक है।यह 110 हाथियों के वजन के बराबर है। दुनिया भर में हर साल करीब 450 मिलियन टन प्लास्टिक का उत्पादन होता है।गौरतलब है कि 1950 में दुनिया भर में महज 15 लाख टन प्लास्टिक का उत्पादन होता था, जबकि वर्ष 2022 तक यह आंकड़ा 400 करोड़ टन पर पहुंच गया है, जिससे स्थिति की गंभीरता समझी जा सकती है। क्या यह आश्चर्यजनक और गंभीर बात नहीं है कि हर साल करीब 1.3 करोड़ टन प्लास्टिक कचरा समुद्र में गिराया जाता है। एक उपलब्ध जानकारी के अनुसार प्लास्टिक 11 किलोमीटर गहराई तक पाया गया है। इतना ही नहीं, दुनिया भर में पैदा हुए सात अरब टन प्लास्टिक कचरे में से 10 प्रतिशत से भी कम को रिसाइकिल किया गया है। आंकड़े बताते हैं कि हर साल प्लास्टिक प्रदूषण से 10 लाख से अधिक समुद्री पक्षी और 100,000 समुद्री जानवर मर जाते हैं। जानकारी मिलती है कि 100% शिशु समुद्री कछुओं के पेट में प्लास्टिक होता है। उल्लेखनीय है कि हमारे महासागर में अब 5.25 ट्रिलियन प्लास्टिक के वृहद और सूक्ष्म टुकड़े हैं, तथा महासागर के प्रत्येक वर्ग मील में 46,000 टुकड़े हैं, जिनका वजन 269,000 टन तक है। क्या यह गंभीर बात नहीं है कि वर्तमान में हमारे महासागरों में अनुमानतः 75 से 199 मिलियन टन प्लास्टिक कचरा है, तथा प्रतिवर्ष 33 बिलियन पाउंड प्लास्टिक समुद्री पर्यावरण में प्रवेश कर रहा है और हर दिन लगभग 8 मिलियन प्लास्टिक के टुकड़े हमारे महासागरों में पहुंचते हैं। विश्व में प्रतिवर्ष 381 मिलियन टन प्लास्टिक कचरा उत्पन्न होता है, जो वर्ष 2034 तक दोगुना हो जाएगा। इसमें से 50% एकल-उपयोग प्लास्टिक है और केवल 9% का ही पुनर्चक्रण किया गया है। आंकड़े बताते हैं कि समुद्र की सतह का 88% हिस्सा प्लास्टिक कचरे से प्रदूषित है और हर साल 8 से 14 मिलियन टन तक कचरा हमारे महासागर में प्रवेश करता है। ब्रिटेन प्रतिवर्ष 1.7 मिलियन टन प्लास्टिक तथा अमेरिका हर साल 38 मिलियन टन प्लास्टिक का योगदान देता है। वास्तव में,प्लास्टिक पैकेजिंग इसका सबसे बड़ा दोषी है, जिसके कारण अकेले अमेरिका में प्रतिवर्ष 80 मिलियन टन कचरा उत्पन्न होता है। आज हर चीज की पैकेजिंग प्लास्टिक में की जाती है, हमें इससे बचना होगा और इसके बेहतर विकल्प तलाशने होंगे।आज हर मिनट 10 लाख से अधिक प्लास्टिक थैलियां कूड़े में फेंकी जाती हैं। इतना ही नहीं,विश्व में प्रति वर्ष 500 बिलियन से अधिक प्लास्टिक बैग का उपयोग किया जाता है-यानि पृथ्वी पर प्रत्येक व्यक्ति के लिए 150 बैग। प्लास्टिक के आंकड़े वास्तव में बहुत ही गंभीर हैं। 8.3 बिलियन प्लास्टिक स्ट्रॉ दुनिया के समुद्र तटों को प्रदूषित करते हैं, लेकिन केवल 1% स्ट्रॉ ही समुद्र में अपशिष्ट के रूप में पहुंचते हैं। इतना ही नहीं, मानव उपभोग के लिए पकड़ी गई 3 में से 1 मछली में प्लास्टिक होता है। अंत में यही कहूंगा कि वर्ष 2022 में संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण सभा (यूएनईए) में प्लास्टिक संधि पर प्रस्ताव लाए जाने के बावजूद अब तक प्लास्टिक पर कोई ठोस कदम नहीं उठाये जा सकें हैं। वास्तव में यह दशार्ता है कि हम सभी प्लास्टिक को लेकर बहुत ही लापरवाही बरत रहे हैं। आज भी हमारे देश में सिंगल यूजर प्लास्टिक का धड़ल्ले से उपयोग किया जाता है। यह पर्यावरण प्रदूषण, मानव स्वास्थ्य और वन्य जीवों को बेतहाशा नुकसान पहुंचा रहा है। ग्लोबल वार्मिंग को जन्म दे रहा है। पाठकों को जानकारी देना चाहूंगा कि भारत में 1 जुलाई, 2022 से सिंगल यूज प्लास्टिक पर प्रतिबंध लगाया गया है। इस प्रतिबंध के तहत, एक बार इस्तेमाल होने वाले प्लास्टिक के निर्माण, आयात, भंडारण, वितरण, बिक्री, और इस्तेमाल पर रोक है, लेकिन इसके बावजूद जिस तरह से सिंगल यूज प्लास्टिक का उपयोग बदस्तूर जारी है, वह वाकई चिंतित करने वाला है। आज जरूरत इस बात की है कि हम प्लास्टिक के उपयोग को लेकर सतर्कता बरतें, लोगों को जागरूक करें और हमारी प्रकृति, पर्यावरण को प्लास्टिक के खतरों से बचाएं। प्लास्टिक प्रदूषण आज एक वैश्विक समस्या है,हम सभी को इस समस्या से निपटने के लिए सामूहिकता से आगे आना होगा। तभी हम वास्तव में अपने नीले ग्रह को प्लास्टिक असुर से बचा पाएंगे।

(फ्रीलांस राइटर, कालमिस्ट व युवा साहित्यकार, उत्तराखंड)

अमेरिकी टैरिफ: भारत को नुकसान या फायदा?

सुनील कुमार महला
वरिष्ठ स्तंभकार

हाल ही में अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रम्प ने टैरिफ की घोषणा की है। गौरतलब है कि ट्रंप के 60 देशों पर पारस्परिक टैरिफ लगाया है। इनमें भारत भी शामिल है। अमेरिका ने भारत पर 27 प्रतिशत टैरिफ लगाने का फैसला किया है। यहां यदि हम टैरिफ की बात करें तो यह वस्तुओं के आयात पर लगाए जाने वाला सीमा शुल्क या आयात शुल्क है, जिसे आयातक की तरफ से सरकार को देना होता है। आम तौर पर कंपनियां इनका बोझ उपयोगकताओं पर डालती हैं। दूसरे शब्दों में, इसका असर आम लोगों की जेब पर ही पड़ता है। वहीं यदि हम जबाबी टैरिफ की बात करें तो यह शुल्क व्यापारिक साझेदारों की तरफ से लगाए जा रहे शुल्क में वृद्धि या उच्च शुल्क के जवाब में लगाया जाता है।

ट्रंप की टैरिफ घोषणा से वैश्विक व्यापार पर एक नया असर पड़ना स्वाभाविक ही है। टैरिफ मैन द्वारा टैरिफ की घोषणा के बाद शेयर बाजार में भी गिरावट देखी गई। पाठकों को बताता चलूं कि अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप के रेसिप्रोकल टैरिफ का सीधा असर भारतीय शेयर बाजार पर देखने को मिला है और मार्केट ओपन होने के साथ ही बीएसई सेंसेक्स व एनएसई निफ्टी बुरी तरह टूट गए,शेयर बाजार में गिरावट के साथ ही इंडियन करेंसी भी गुरुवार(3 अप्रैल 2025) को टूटी है और अमेरिकी डॉलर के मुकाबले रुपया 26 पैसे गिरकर 85.78 पर आ गया। न केवल भारतीय बाजार बल्कि यूएस स्टोक मार्केट भी क्रैश हुआ। पाठकों को बताता चलूं कि गुरुवार को

एस एंड पी 500 में वर्ष 2020 के बाद से सबसे बड़ी एक दिन की गिरावट दर्ज की गई। डाऊ जोन्स इंडस्ट्रियल एवरेज 4.0% गिरावट के साथ 40,545.93 पर बंद हुआ। इसने 1,600 अंकों से अधिक का गोता लगाया। ट्रंप के टैरिफ ने निवेशकों में दहशत फैला दी है, और बाजार को लग रहा है कि इससे मंदी, महंगाई और कमजोर मुनाफे का दौर शुरू हो सकता है। कुल मिलाकर अमेरिकी बाजार छह प्रतिशत तक गिरा। मार्केट कैप करीब 2 ट्रिलियन डॉलर घट गया। यहां तक कि एप्पल और नाइकी के शेयर 15 प्रतिशत तक टूट गये। यहां यह भी उल्लेखनीय है कि एप्पल के आईफोन मुख्य रूप से चीन में बनाए जाते हैं और ट्रंप के टैरिफ का सबसे बड़ा असर भी चीन पर ही पड़ा है।

बहरहाल,गौरतलब है कि अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप ने हाल ही में भारत पर 26 प्रतिशत 'रियायती पारस्परिक शुल्क' लगाने की घोषणा की है जो भारत द्वारा अमेरिकी वस्तुओं पर लगाए गए 52 प्रतिशत शुल्क का आधा है। पाठकों को बताता चलूं कि ट्रंप ने भारत को 'बहुत कठोर' बताया है। उन्होंने यह बात कही है कि, 'यह मुक्ति दिवस है, एक ऐसा दिन जिसका हम लंबे समय से इंतजार कर रहे थे। 2 अप्रैल 2025 को हमेशा उस दिन के रूप में याद किया जाएगा, जिस दिन अमेरिकी इंडस्ट्रीस का पुनर्जन्म हुआ, जिस दिन अमेरिका ने नियति को पुनः प्राप्त किया और जिस दिन हमने अमेरिका को फिर से समृद्ध बनाना शुरू किया।' साथ ही, उन्होंने यह भी कहा है कि 'हम अमेरिका को अच्छार और समृद्ध बनाएंगे।' बहरहाल, जो भी हो डोनाल्ड ट्रम्प की टैरिफ घोषणा से वैश्विक व्यापार पर असर पड़ता लाज़िमी ही है। पाठक जानते होंगे कि ट्रंप ने भारत ही नहीं बल्कि दुनिया के तकरीबन सभी प्रमुख देशों पर पारस्परिक टैरिफ की घोषणा की है। उनकी घोषणा के तुरंत बाद ही बाजारों में हलचल देखने को मिली। अमेरिका का दावा है कि भारत पर 26 फीसदी का शुल्क, भारत द्वारा अमेरिकी उत्पादों पर लगाए गए 52 फीसदी टैरिफ के जवाब में है, जो उनके अमेरिका फर्स्ट एजेंडे का ही हिस्सा है। दरअसल, ट्रंप यह बात बहुत पहले से ही कहते आए हैं कि यदि कोई देश अमेरिकी सामान पर ज्यादा आयात शुल्क लगाता है, तो अमेरिका भी उस देश से आयात होने वाली चीजों पर ज्यादा टैरिफ लगाएगा।

कहना गलत नहीं होगा कि भारत अमेरिकी वस्तुओं पर सबसे ज्यादा टैरिफ लगाने वाले देशों में शामिल है और इसे देखते हुए हाल ही में ट्रंप का लगाया गया जवाबी शुल्क अप्रत्याशित नहीं है। वास्तव में भारत अमेरिका को काफी वस्तुओं का निर्यात करता है। पाठकों को बताता चलूं कि अमेरिका की नई टैरिफ पॉलिसी के तहत भारतीय उत्पादों पर 27 फीसदी तक टैरिफ लगाया जाएगा। इसमें एक यूनिवर्सल 10 फीसदी टैरिफ भी शामिल है, जो 5 अप्रैल से प्रभावी हो जाएगा। वहीं, 27 फीसदी टैरिफ 9 अप्रैल से लागू होगा। अमेरिका द्वारा घोषित इस नए टैरिफ से भारत के कई एक्सपोर्ट सेक्टर्स पर असर पड़ने की आशंका है। इनमें झींगा मछली, कालीन, गोल्ड जूलरी, चिकित्सा उपकरण जैसे उत्पाद शामिल हैं। गौरतलब है कि अमेरिका भारतीय झींगा मछली का सबसे बड़ा बाजार है और हाई टैरिफ के कारण भारतीय झींगा अमेरिकी बाजार में कम प्रतिस्पर्धी हो जाएगी।

उपलब्ध जानकारी के अनुसार अमेरिका पहले से ही भारतीय झींगा पर डंपिंग-रोधी और प्रतिपूरक शुल्क लगा रहा है। भारत अपने झींगा निर्यात का

लिए टैरिफ का यह अंतर 23.1 फीसदी है। इतना ही नहीं,प्रसंस्कृत खाद्य, चीनी और कोको निर्यात पर भी असर पड़ सकता है, क्योंकि इसमें टैरिफ अंतर 24.99 प्रतिशत है। पिछले साल इसका निर्यात 1.03 अरब डॉलर था। इसी तरह, अनाज, सब्जियां, फल और मसाले के क्षेत्र में टैरिफ अंतर 5.72 प्रतिशत है। वास्तव में,टैरिफ अंतर जितना अधिक होगा, संबंधित क्षेत्र उतना ही अधिक प्रभावित हो सकता है।

घरेलू उद्योग व निर्यातकों ने भारत के निर्यात पर अमेरिकी टैरिफ के असर को लेकर चिंता जताई है क्योंकि शुल्क से बाजारों में कई वस्तुएं प्रतिस्पर्धा से बाहर हो सकती हैं। उल्लेखनीय है कि अमेरिका भारत का सबसे बड़ा व्यापारिक साझेदार है लेकिन यहां यह कहना गलत नहीं होगा कि चीन (34 फीसदी), वियतनाम (46 फीसदी), बांग्लादेश (37 फीसदी), थाईलैंड (36) फीसदी) और इंडोनेशिया (32 फीसदी) की तुलना में भारत पर लगाया गया टैरिफ कम ही है। इसलिए स्थिति तुलनात्मक रूप से भारत के लिए अच्छी हो सकती है। यहां पाठकों को बताता चलूं कि वित्त वर्ष 2021-22 से 2023-24 तक अमेरिका भारत का सबसे बड़ा व्यापारिक साझेदार था। अमेरिका की भारत के कुल माल निर्यात में हिस्सेदारी करीब 18%, आयात में 6.22% और द्विपक्षीय व्यापार में 10.73% है।अमेरिका के साथ 2023-24 में भारत का व्यापार अधिशेष (आयात व निर्यात में अंतर) 35.32 अरब अमेरिकी डॉलर था।

40% अमेरिका को भेजता है जहां इसके मुख्य प्रतिस्पर्धी इक्वाडोर और इंडोनेशिया हैं। वास्तव में, कृषि क्षेत्र में अमेरिका के जवाबी टैरिफ का सबसे अधिक प्रभाव मछली, मांस और प्रसंस्कृत समुद्री भोजन के निर्यात पर पड़ेगा। वर्ष 2024 में इनका निर्यात 2.58 अरब डॉलर था। अब हालिया घटनाक्रम के बीच इस क्षेत्र पर 27.83 प्रतिशत से अधिक टैरिफ का भार बढ़ सकता है। इसी प्रकार से अमेरिका भारत से बड़ी मात्रा में कालीनों का भी आयात करता है। जानकारी के अनुसार वित्त वर्ष 2023-24 में यह(कालीन आयात) लगभग 2 अरब डॉलर का था। नए टैरिफ से इस सेक्टर पर भी व्यापक असर पड़ेगा। इतना ही नहीं अमेरिका भारत से रत्न और आभूषणों का भी बड़ी संख्या में आयात करता है।एक उपलब्ध जानकारी के अनुसार वित्त वर्ष 2023-24 में भारत ने वैश्विक स्तर पर 32.85 अरब डॉलर के रत्न और आभूषण निर्यात किए, जिसमें अमेरिका का हिस्सा 30.28% (10 अरब डॉलर) था। नए टैरिफ से इस सेक्टर पर भी बहुत असर पड़ेगा। जानकारी के अनुसार तराशे हुए हीरे पर शुल्क 0% से 20% तक और सोने के आभूषणों पर 5.5-7% तक बढ़ सकता है। इतना ही नहीं,अमेरिका द्वारा चिकित्सा उपकरण निर्यात पर 27% टैरिफ लगाने से इस सेक्टर की ग्रोथ के लिए चुनौतियाँ पैदा हो सकती हैं। वित्त वर्ष 2023-24 में भारत का अमेरिका को चिकित्सा उपकरण निर्यात 71 करोड़ 43.8 लाख डॉलर था।

संक्षेप में कहें तो टैरिफ से हमारे देश के कृषि, ऑटोमोबाइल, दवा, स्वर्ण आभूषण जैसे क्षेत्रों पर बड़ा असर हो सकता है। वहीं, रसायन और दवा क्षेत्र में यह 8.6 प्रतिशत, प्लास्टिक के लिए 5.6, वस्त्र-परिधान 1.4, हीरे, सोने व आभूषणों के लिए 13.3 फीसदी, लोहा, इस्पात और आधार धातुओं के लिए 2.5 प्रतिशत, मशीनरी व कंप्यूटर के लिए 5.3 प्रतिशत, इलेक्ट्रॉनिक्स के लिए 7.2 फीसदी व ऑटोमोबाइल और ऑटो घटकों के

बहरहाल,यहां यह भी उल्लेखनीय है कि रेसिप्रोकल टैरिफ की घोषणा में फार्मास्युटिकल्स उद्योग को छूट दी गई है। गौरतलब है कि हिमाचल प्रदेश देश का सबसे बड़ा फार्मा हब है। बद्दी, परवाणू और पांवटा साहिब में देश की सभी प्रतिष्ठित कंपनियां दवाओं का उत्पादन कर रही हैं। पाठकों को बताता चलूं कि ट्रंप ने जब टैरिफ की घोषणा की तो भारत पर 27 फीसदी टैरिफ तो लगाया लेकिन फार्मा उद्योग को इससे पूरी तरह बाहर रखा गया, जो राहत की बात है, लेकिन हिमाचल के बागवानों को शंका है। दरअसल, यह आशंकाएं जताई जा रही हैं कि अमेरिकी दबाव में भारत सरकार सेब पर आयात शुल्क घटा सकती है। इससे हिमाचल प्रदेश के सेब बागवान चिंतित हो गए हैं। पाठकों को बताता चलूं कि दवा के अलावा सेमीकंडक्टर, तांबे के अलावा तेल, गैस, कोयला, एलएनजी जैसे ऊर्जा उत्पाद टैरिफ के दायरे से बाहर रखे गए हैं। बहरहाल, यदि हम यहां पर भारत पर शुल्क की बात करें तो इस्पात, एल्युमीनियम और वाहनों तथा कलपुर्जों पर पहले से ही 25% शुल्क लागू है। शेष उत्पादों पर 5 से 8 अप्रैल के बीच 10% का मूल (बेसलाइन) शुल्क लगेगा और 9 अप्रैल से बढ़कर 27% हो जाएगा।

भारत के लिए अमेरिका का लगाया टैरिफ कितनी बड़ी चुनौती है तो इस संबंध में विशेषज्ञों का मानना है कि भारत की स्थिति अपने प्रतिस्पर्धी देशों की तुलना में बेहतर है। भारत को वैश्विक आपूर्ति शृंखला में अपनी भूमिका बढ़ाने का अवसर मिल सकता है। लेकिन इसके लिए उसे व्यापार को आसान बनाना होगा, लॉजिस्टिक्स और बुनियादी ढांचे में निवेश करना होगा। यहां पाठकों को यह भी बताता चलूं कि अमेरिका ने जो टैरिफ लगायें हैं वे डब्ल्यूटीओ के अनुरूप नहीं हैं। मसलन,ये शुल्क स्पष्ट तौर पर विश्व व्यापार संगठन के नियमों का उल्लंघन करते हैं। यह एमएफएन (तरजीही राष्ट्र) दायित्वों तथा बाध्य दर प्रतिबद्धताओं के भी खिलाफ हैं। सदस्य देशों को इनके खिलाफ डब्ल्यूटीओ के विवाद निपटान तंत्र का दरवाजा खटखटाने का पूरा अधिकार है।

पीएम नरेंद्र मोदी ने फरवरी में अमेरिका यात्रा के दौरान 2030 तक द्विपक्षीय व्यापार 500 अरब डॉलर तक बढ़ाने की घोषणा की थी। वास्तव में, दोनों पक्षों का लक्ष्य इस साल अक्तूबर तक सौदे के पहले चरण को अंतिम रूप देना है, और उम्मीद की जानी चाहिए कि भारत की ओर से अधिकांश चर्चा इन शुल्कों के कुछ प्रतिकूल प्रभावों को कम करने पर केंद्रित होगी। कहना चाहूंगा कि टैरिफ संकट से भारत को अमेरिका के साथ अपने व्यापारिक संबंधों में विविधता लाने का अवसर प्रदान करेगा। हालांकि यह भी स्पष्ट है कि ट्रंप की रेसिप्रोक्ल टैरिफ पालिसी असल प्रभाव आने वाले समय में स्पष्ट होगा, लेकिन इसने वैश्विक व्यापार को एक नया मोड़ तो दिया ही है। निस्संदेह यह हमें हमारी आर्थिक नीतियों को फिर से परखने का समय है। कहना गलत नहीं होगा कि आज जरूरत इस बात की है कि सरकार व उद्योग मिलकर ऐसी ठोस रणनीतियां बनाएं, जिससे हम टैरिफ आपदा में निहित अवसरों का अधिकतम लाभ उठा सकें। बहरहाल, हमारे देश के लिये अच्छी बात यह है कि हमारे मुख्य प्रतिस्पर्धी-चीन, वियतनाम, बांग्लादेश और थाईलैंड पर हम से कहीं अधिक शुल्क लगाया गया है। हाल फिलहाल, सरकार को यह उम्मीद है कि वाशिंगटन के साथ द्विपक्षीय व्यापार समझौते पर काम चल रहा है, जिसके जरिये घरेलू उद्योग को टैरिफ वृद्धि के दुष्प्रभावों से निपटने में मदद मिल सकती है। वास्तव में,अतीत से सबक लेकर भारत को नई स्थितियों का लाभ उठाने के लिये बेहतर ढंग से तैयार रहना चाहिए।

हमें अपने पड़ौसी चीन से भी सतर्क रहने की आवश्यकता है, क्यों कि चीन भारत को कहीं न कहीं प्रतिस्पर्धा के बाजार में भारत को शिकस्त दे सकता है। कहना गलत नहीं होगा कि चीन कम लागत वाले सामानों के जरिये भारतीय बाजारों को प्रभावित करने की कोशिश कर सकता है। बहरहाल, कहना चाहूंगा कि आज भारत दुनिया का सबसे अधिक युवा आबादी वाला देश है, इसलिए हमें यह चाहिए कि हम अपनी श्रमशक्ति के बेहतर उपयोग की दिशा में गंभीरता से काम करें। हमें यह चाहिए कि हम कौशल विकास(स्किल डेवलपमेंट) पर अपना ध्यान केंद्रित करें। कहना गलत नहीं होगा कि कुशल कामगारों से हम वैश्विक चुनौतियों का मुकाबला करने में सक्षम हो सकते हैं। इतना ही नहीं, हमें अपना विदेशी निवेश भी बढ़ाना होगा। हमें अपने डोमेस्टिक इन्वेस्टमेंट को भी गति देनी होगी। जरूरत इस बात की है कि हम अपने निर्यात को अन्य देशों में बढ़ाने के लिए काम करें, तभी हम वास्तव में अमेरिकी टैरिफ संकट का सामना करते हुए अपने देश की अर्थव्यवस्था और विकास को और अधिक गति दे पाएंगे।

(लेखक कॉलमिस्ट एवं युवा साहित्यकार हैं)

स्वास्थ्य की उम्मीद में दुनिया

विजय गर्ग
वरिष्ठ शैक्षणिक स्तंभकार

आम लोगों का स्वास्थ्य कभी भी राजनीति का मुख्य एजेंडा रहा ही नहीं, जबकि आज भारत ही नहीं पूरी दुनिया में स्वास्थ्य एक बेहद जरूरी विषय के रूप में खड़ा हो गया है। विश्व स्वास्थ्य दिवस 2025 का थीम या लक्ष्य की यदि हम बात करें तो इस वर्ष यह मिलेनियम स्वास्थ्य लक्ष्य को हासिल करने के उद्देश्य से 'आशापूर्ण भविष्य के लिए स्वस्थ शुरूआत' पर जोर दे रहा है। विश्व स्वास्थ्य संगठन ने लक्ष्य की घोषणा करते हुए कहा है कि प्रत्येक स्वास्थ्य संगठन और समुदाय यह सुनिश्चित करें कि मां और नवजात शिशु का स्वास्थ्य सुरक्षित रहे तथा इनकी असमय मृत्यु को रोका जा सके। उल्लेखनीय है कि विगत वर्ष 2024 में विश्व स्वास्थ्य संगठन ने अपना लक्ष्य 'मेरा स्वास्थ्य मेरा अधिकार' रखा था। यह अलग बात है कि दुनिया भर की सरकारों ने स्वास्थ्य के नागरिक अधिकारों पर स्पष्ट रूप से कुछ भी ठोस नहीं किया। हां, भारत में एकमात्र राज्य राजस्थान की पूर्व कांग्रेस की सरकार ने नागरिकों के स्वास्थ्य को उनके मौलिक अधिकार के रूप में कानून बनाकर लागू कर दिया।

'स्वस्थ शुरूआत आशापूर्ण भविष्य' के विभिन्न पहलुओं पर यदि ध्यान दें तो निश्चित ही नवजात शिशु एवं माताओं के स्वास्थ्य को प्राथमिकता देनी होगी। इसके लिए प्रत्येक प्रखंड एवं गांवों में स्वास्थ्य के बुनियादी ढांचों को और मजबूत करना होगा तथा सामुदायिक स्वास्थ्य कर्मियों जैसे आशा कार्यकर्ता, आंगनबाड़ी सेविका एवं प्रत्येक प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों को सक्रिय बनाना होगा। चिकित्सकों एवं स्वास्थ्य कर्मियों को और जवाबदेह बनाना होगा। सभी सरकारों को अपना स्वास्थ्य बजट सम्मानजनक तरीके से जीडीपी के अनुसार बढ़ाना होगा। यह सुनिश्चित करना होगा कि समुचित पोषण और दवा के अभाव में कोई भी शिशु या गर्भवती मां अथवा व्यक्ति

की असमय मृत्यु न हो। स्वास्थ्य और उपचार की सर्वसुलभता सुनिश्चित करनी होगी। सरकार और समुदाय को मिलकर काम करना होगा।

आजादी के सात दशक बीत जाने के बाद भी देश में जनस्वास्थ्य की स्थिति बहुत अच्छी नहीं है। केंद्र सरकार एवं राज्य सरकारों के चलाए जा रहे अनेक स्वास्थ्य कार्यक्रमों एवं अभियानों के बाद भी हम अपेक्षित लक्ष्यों को प्राप्त नहीं कर सके हैं। महज आंकड़ों की बाजीगीरी और झूठे प्रचार से जन-स्वास्थ्य के लक्ष्य को प्राप्त नहीं किया जा सकता। भारत सरकार ने एक राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति बनाई थी जिसके अंतर्गत विभिन्न रोगों से बचाव एवं उपचार के लिए राष्ट्रीय कार्यक्रमों का संचालन लंबे समय से किया जा रहा है। ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य सेवाएं उपलब्ध कराने के लिए भारत सरकार की महत्वाकांक्षी योजना 'राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन' का संचालन भी किया जा रहा है, इन सबके बावजूद जनस्वास्थ्य को हम सही दिशा नहीं दे पा रहे हैं। इसका अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि महिलाओं में प्रसव के दौरान होने वाली जटिलताओं तथा नवजात शिशुओं और बच्चों की रुग्णता व मृत्यु दर को कम करने में अपेक्षित सफलता नहीं मिल पायी है।

वर्ष 2025 के स्वास्थ्य लक्ष्य की घोषणा करते हुए विश्व स्वास्थ्य संगठन की दृष्टि महिलाओं और नवजात शिशुओं के स्वास्थ्य पर ही गई। विश्व स्वास्थ्य संगठन चाहता है कि दुनिया भर में नवजात शिशुओं और माताओं का स्वास्थ्य बेहतर हो ताकि भविष्य की आबादी में स्वस्थ लोगों की अच्छी संख्या हो। हम जानते हैं कि दुनिया भर में महिलाओं के स्वास्थ्य के प्रति समाज और सरकारें सदैव दोयम दर्जे की दृष्टि रखते हैं। हालांकि, पश्चिमी देशों में महिलाओं की स्थिति काफी बेहतर है लेकिन भारत एवं एशियाई देशों में महिलाओं को स्वास्थ्य प्राप्त करने के लिए पुरुषों की अपेक्षा ज्यादा जद्दोजहद करनी पड़ती है। आजादी के बाद से अब तक भारत में दो बार राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण हुए। इसमें केंद्र सरकार के साथ-साथ अंतर्राष्ट्रीय जनसंख्या अध्ययन संस्थान ने भी हिस्सा लिया। सार्वजनिक रूप से अप्रकाशित इन सर्वेक्षण रिपोर्टों के अनुसार प्रत्येक एक लाख जीवित शिशु के जन्म पर लगभग 540 माताओं की मृत्यु हो जाती है।

भारत में औरतों की नाजुक सेहत की वजह जानने के लिए उनकी ज़िंदगी पर जन्म के बाद से ही नजर दौड़ानी होगी। जानी मानी फ्रेंच लेखिका शिमोन द बौवार कहती हैं कि ह्यऔरत की सेहत इसलिए खराब है क्योंकि वह स्त्री है ह्न हमें यह भी ध्यान रखना होगा कि आधुनिकीकरण एवं अन्य कई कारणों से भी कई पुराने रोग पुनः नए रूप में उभर कर सामने आ रहे हैं। अनेक प्रयासों के बावजूद हम वर्षों पुराने मच्छर जनित रोग मलेरिया, डेंगू आदि से उबर नहीं पाए हैं। तथाकथित आधुनिक जीवनशैली के कई रोग जैसे डायबिटीज हृदय रोग, उच्च रक्तचाप, कैंसर, एड्स आदि बढ़ते ही जा रहे हैं। खान-पान की गड़बड़ी की वजह से पेट के कई घातक रोग बढ़ गए हैं। मानसिक रोगों की भी यही स्थिति है। बहुत ही कम उम्र के युवा और नौजवान अवसाद और अनिद्रा, तनाव आदि के शिकार हैं। युवाओं में घातक नशे का बढ़ता प्रचलन भी स्वास्थ्य की चुनौती के रूप में खड़ा है। सरकार और समुदाय यदि इस पर ध्यान नहीं देते तो स्थिति भयावह होगी। बहरहाल, उम्मीद की जानी चाहिए कि मानव स्वास्थ्य जैसे महत्वपूर्ण मुद्दे पर हमारी सरकारें क्षुद्र राजनीति से ऊपर उठ कर व्यापक जनहित में कार्य करेंगी।

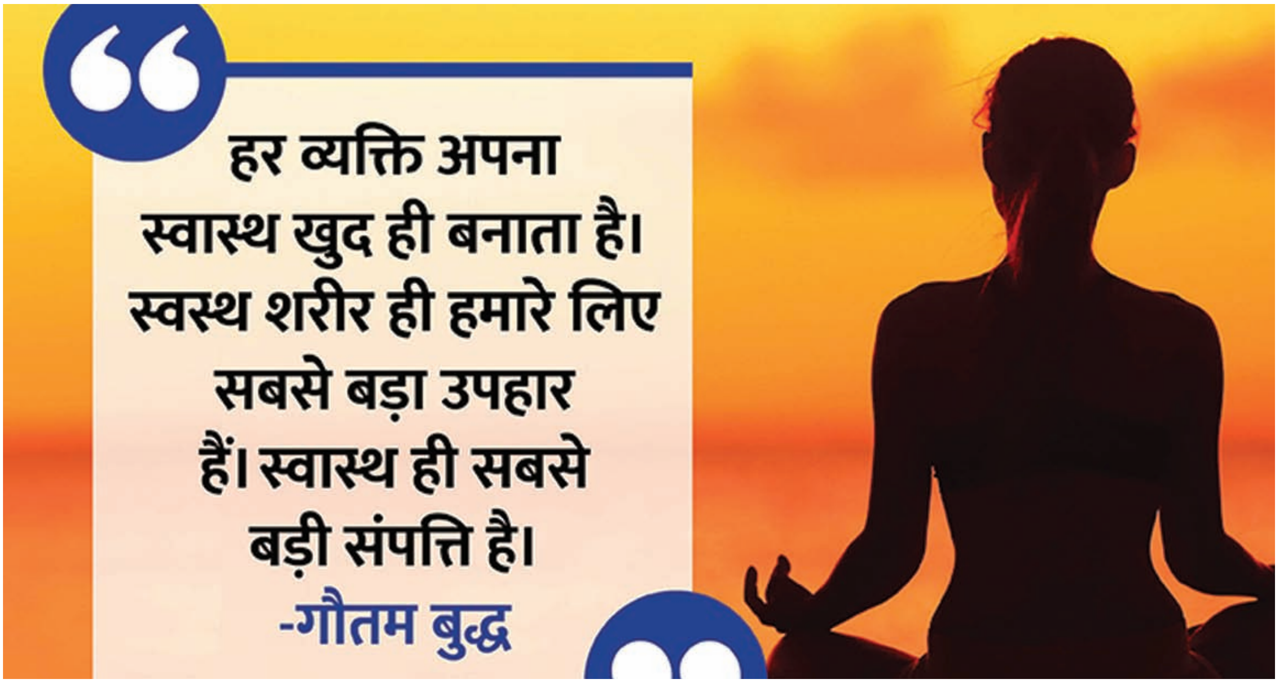

... अब 'सीनियर मोदी' को निपटा पाएंगे अश्विनी चौबे?

बीजेपी के वरिष्ठ नेता और पूर्व केंद्रीय मंत्री अश्विनी कुमार चौबे ने कहा है कि बिहार के मुख्यमंत्री नीतीश कुमार को उपप्रधानमंत्री बनाया जाना चाहिए। चूंकि केंद्रीय राजनीति में आने से पहले श्री चौबे बिहार में नीतीश कुमार के मंत्रिमंडल में अपनी सेवाएं दे चुके हैं, इसलिए उनकी ताजा और दिलचस्प टिप्पणी के सियासी मायने तलाशे जा रहे हैं। इस ताजा तरीन बयानबाजी की टाइमिंग भी महत्वपूर्ण है।

तो क्या 'जूनियर मोदी' के बाद अब 'सीनियर मोदी' को निपटा पाएंगे अश्विनी चौबे, यह यक्ष प्रश्न सियासी गलियारों में तैर रहा है!

जहां एक ओर राष्ट्रीय भाजपा अध्यक्ष बदले जाने वाले हैं तो वहीं दूसरी तरफ बिहार विधानसभा चुनाव 2025 सिर पर है। इसके अलावा, वक्फ संशोधन बिल पर भाजपा के साथ अडिग रहकर जदयू ने दिखा दिया कि अब वह राजग के प्रति सियासी रूप से निष्ठावान है। ऐसे में अश्विनी चौबे ने एक तीर से कई सियासी शिकार करने की कोशिश की है जिसके राजनीतिक निहितार्थ गम्भीर माने जा रहे हैं क्योंकि यह सब कुछ अनायास नहीं बल्कि भाजपा-जदयू के विक्षुब्ध गुट की एक सोची समझी सियासी रणनीति के तहत किया गया प्रतीत होता है।

कमशेष पांडेय
वरिष्ठ स्तंभकार एवं विश्लेषक

ऐसा इसलिए कि अश्विनी कुमार चौबे ने कहा है कि वह जनता दल (यूनाइटेड) के प्रमुख व बिहार में सर्वाधिक समय तक मुख्यमंत्री पद पर जमे रहने वाले नीतीश कुमार को दिवंगत कांग्रेस नेता जगजीवन राम के बाद बिहार से दूसरे उपप्रधानमंत्री के

रूप में देखना चाहते हैं। इतना ही नहीं, उन्होंने यहां तक कहा है कि राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन (राजग) में नीतीश कुमार का उल्लेखनीय योगदान है। वह गठबंधन में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाकर प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के हाथ मजबूत कर रहे हैं। इसलिए उनकी (चौबे की) व्यक्तिगत इच्छा है कि उन्हें उपप्रधानमंत्री बनाया जाए। यदि उनकी यह इच्छा पूरी हुई तो बिहार बाबू जगजीवन राम के बाद अपनी धरती के दूसरे बेटे को इस पद पर आसीन होते देखेगा।

सवाल है कि अब तक पीएम मेटेरियल समझे जाने वाले नीतीश कुमार को श्री चौबे उपप्रधानमंत्री बनवाने को आखिर क्यों लालायित हैं? आखिर विगत सवा साल से भाजपा-संघ के सियासी बियावान में भटक रहे अश्विनी कुमार चौबे ने अपनी राजनीतिक सांझ में ऐसा बयान क्यों दिया? क्या आ-रएसएस के किसी नेता ने उन्हें इसके लिए उकसाया है? या फिर भाजपा के किसी दिग्गज नेता के इशारे पर उन्होंने यह बयान दिया है? या फिर पार्टी में अपनी उपेक्षा से वह इतने क्षुब्ध हैं कि जदयू में शामिल होने की पृष्ठभूमि तैयार कर रहे हैं? या फिर एक पुराने कांग्रेस नेता की तारीफ करके कांग्रेसियों के दिल में अपनी जगह बनाने में जुटे हैं जो भागलपुर में मजबूत स्थिति में हैं और उनकी सीट पर काबिज भी हैं।

बता दें कि भागलपुर को अपनी कर्मभूमि बनाने वाले बक्सर पुत्र अश्विनी कुमार चौबे कोई साधारण राजनेता नहीं हैं। उनके मौसा प्रभाष चंद्र तिवारी भागलपुर के पूर्व सांसद रह चुके हैं जिसका क्रेडिट उन्हें ही जाता है क्योंकि संघ से जुड़े रहे श्री तिवा-री के सहयोग से श्री चौबे भागलपुर में अपनी सियासी पैर जमाए थे और अपनी ऊंची सियासी उड़ान के साथ ही उन्होंने अपने मौसा श्री तिवारी को भी संसदीय पारी खेलवा दी।

ऐसा इसलिए कि बिहार के कद्दावर भाजपा नेता और गुजरात के राज्यपाल रहे

कैलाशपति मिश्रा की सियासी जड़ें खोदने वाले बिहार के पूर्व उपमुख्यमंत्री सुशील कुमार मोदी को अश्विनी कुमार चौबे की जरूरत एक सवर्ण चेहरे के तौर पर थी क्योंकि बिहार विधानसभा अध्यक्ष नंदकिशोर यादव, कैबिनेट मंत्री प्रेम कुमार आदि जो उनके गुड बुक के नेता थे, वह उनके ओबीसी वर्ग से आते थे। अपनी इसी राजनीतिक दोस्ती का फायदा उठाते हुए श्री चौबे ने गोड्डा, झारखंड के मौजूदा सांसद निशिकांत दूबे का सियासी पांव भागलपुर में नहीं जमने दिया।

हालांकि जब वक्त ने पलटा खाया तो चौबे को भागलपुर भी छोड़ना पड़ा और बक्सर लोकसभा सीट से केंद्रीय राजनीति में प्रवेश लेना पड़ा जिसके बाद मोदी कैबिनेट में वो केंद्रीय मंत्री तक बने हालांकि, जिस तरह से मोदी 3.0 पारी शुरू होने से पहले बक्सर से उनका टिकट काटा गया, फिर राज्यसभा में भी जगह न दी गई और न ही किसी राज्य का राज्यपाल ही उन्हें बनाया गया। इससे उनका सियासी प्रभाव अब कम हुआ है।

एक बात और, भागलपुर के कद्दावर नगर विधायक और तेजतर्रार कैबिनेट मंत्री समझे जाने वाले अश्विनी चौबे अपने बेटे अर्जित शाश्वत उर्फ प्रिंस चौबे के लिए पार्टी का टिकट तो ले आए लेकिन मतदाताओं ने उन्हें खारिज कर दिया जिससे उनकी सियासी साख गिरी। यह सब तब हुआ जब भागलपुर की सियासी गंगा में भाजपा-संघ का राजनीतिक पानी बहुत बह चुका था। अपने राजनीतिक मित्र सुशील कुमार मोदी की सियासी जड़ें खोदने के चक्कर में भागलपुर का वैश्य मतदाता उनसे छिटक गया।

वहीं, स्वभाव से शातिर पूर्व उपमुख्यमंत्री सुशील कुमार मोदी न केवल

भागलपुर की सियासत में दिलचस्पी लेने लगे बल्कि प्रभाष चंद्र तिवारी की जगह खुद भागलपुर सांसद भी बन बैठे। जब वह उपमुख्यमंत्री बने तो पूर्व केंद्रीय कैबिनेट मंत्री शाहनवाज हुसैन को भागलपुर सांसद बनवा दिया जो निशिकांत दूबे के मित्र माने जाते थे। इस प्रकार मोदी-हुसैन ने मिलकर भागलपुर से चौबे की विदाई सुनिश्चित कर दी। इसी का फायदा उठाकर कांग्रेस ने भागलपुर में अपनी सियासी जड़ें जमा ली। फिलवक्त कांग्रेसी नगर विधायक अजीत शर्मा उनके व उनकी पार्टी के लिए मजबूत चुनौती साबित हो रहे हैं।

इससे क्षुब्ध अश्विनी चौबे ने जूनियर मोदी समझे जाने वाले सुशील कुमार मोदी की ऐसी जड़ें खोदी कि पहले उन्हें उपमुख्यमंत्री पद से हटवाया। फिर जब वो बिहार छोड़कर राज्यसभा के रास्ते दिल्ली पहुंचे तो उनके कैबिनेट मंत्री बनने में अड़ंगा डाला। दरअसल, बिहार भाजपा की सियासत में मुख्य भूमिका में रहे उपमुख्यमंत्री सुशील कुमार मोदी ने पहले राजद सुप्रीमो व तत्कालीन मुख्यमंत्री लालू प्रसाद की ओबीसी स्वामी भक्ति में भाजपा में मजबूत हुए और फिर मुख्यमंत्री नीतीश कुमार की ओबीसी स्वामी भक्ति में अपनी पार्टी भाजपा को जदयू का पिछलग्गू बना दिया।

बता दें कि इससे पहले सुशील मोदी नेता प्रतिपक्ष और बाद में उपमुख्यमंत्री तो बने रहे लेकिन पार्टी का बहुत ही रणनीतिक अहित किया। यही वजह है कि पूर्व केंद्रीय रविशंकर प्रसाद, पूर्व केंद्रीय मंत्री राधामोहन सिंह आदि को तो बहुत राजनीतिक ऊंचाई मिली लेकिन मौजूदा केंद्रीय मंत्री गिरिराज सिंह आदि को कड़ी राजनीतिक मशक्कत करनी पड़ी। यही वजह है कि अश्विनी कुमार चौबे ने टीम सुशील मोदी को तोड़कर बिहार की भाजपा राजनीति में एक संतुलन स्थापित किया जिसका लाभ अभी

नंदकिशोर यादव व प्रेम कुमार आदि को भी मिल रहा है।

वहीं, मौजूदा उपमुख्यमंत्री सम्राट चौधरी व उपमुख्यमंत्री विजय सिन्हा की खोज इसी राजनीतिक कशमकश का नतीजा समझा जाता है। शायद इससे उपजी सियासी कुंठा से भी जूनियर मोदी शीघ्र ही परलोक वासी हो गए। उनके दिल्ली संरक्षक पूर्व केंद्रीय वित्त मंत्री अरुण जेटली पर भी यही बात लागू होती है। इसलिए चर्चा है कि अश्विनी कुमार चौबे ने अपने मन से यह बात नहीं बोली है। या तो मुख्यमंत्री नीतीश कुमार के लोगों ने उन्हें उकसाया है या फिर राष्ट्रीय भाजपा का अध्यक्ष बनने के दावेदार संजय जोशी या फिर कैबिनेट मंत्री नितिन गडकरी की संघ समर्थित लॉबी ने उन्हें इस बयानबाजी के लिए राजी किया है।

चूंकि खुद भी अश्विनी चौबे एक सुलझे हुए नेता हैं, जो भाजपा और संघ दोनों के प्रति समर्पित समझे जाते हैं। पार्टी की केंद्रीय राजनीति से जहां बिहार में कभी उन्हें सियासी ग्रेस मिला तो कभी मुँह की भी खानी पड़ी। अभी पूर्वी बिहार और उत्तरी झारखंड की राजनीति में भागलपुर मूल के गोड्डा सांसद निशिकांत दूबे की जो राजनीतिक धमक दिखाई दे रही है, उससे भी अश्विनी चौबे अपने बेटे के सियासी भविष्य को लेकर चिंतित हैं। शायद इसलिए वो पीएम नरेंद्र मोदी व उनके गुट से नाराज चल रहे हैं।

मसलन, जिस भागलपुर में भाजपा का मतलब अश्विनी चौबे समझा जाता रहा हो, वहां पर ही किसी और के साथ पीएम-राष्ट्रपति का नाम जुड़ना भला कोई दूसरा कद्दावर नेता कैसे बर्दाश्त कर सकता है। इसलिए उन्होंने जूनियर मोदी को निपटाने के दौरान अर्जित सियासी अनुभवों से सीख लेते हुए सीनियर मोदी यानी प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी पर अप्रत्यक्ष हमला बोला है। जिस तरह से पूर्व प्रधानमंत्री अटल बिहारी बाजपेयी की तरह उन्हें भी उपप्रधानमंत्री बनाने की जरूरत बताई है और वह भी अल्पमत वाली भाजपा के लिए गठबंधन सहयोगी जदयू के उस व्यक्ति का नाम सुझाया है जिसे प्रधानमंत्री फूटे आंखों नहीं सोहाते।

यदि अपना अपना राजनीतिक अस्तित्व बचाने की दोनों की मजबूरी नहीं होती तो ये कभी भी एक साथ, एक मंच पर नहीं दिखते। 2014 से पहले नीतीश कुमार ने क्या किया, उसके बाद फिर क्या क्या किया, यह बात किसी से छिपी हुई नहीं है। वहीं, उपप्रधानमंत्री रहे गृहमंत्री लालकृष्ण आडवाणी का सियासी हश्र क्या हुआ, यह उनसे ज्यादा कौन समझ सकता है। इसलिए यह भी समझा जा रहा है कि क्या नीतीश कुमार को उनकी असली औकात में रखने की राजनीतिक कवायद एक बार फिर तेज हो चुकी है क्योंकि वक्फ बिल पर भाजपा के समक्ष जिस तरह से उन्होंने धर्मनिरपेक्ष हथियार डाले हैं, उसके दृष्टिगत इस तरह की ललकार सही नहीं है।

हो सकता है भाजपा द्वारा भागलपुर से उनके बेटे का टिकट पिछली बार काट दिए जाने के बाद इस बार वो जदयू या कांग्रेस से टिकट दिलवाने के जुगाड़ में नई पैंतरेबाजी की है। अब उनके मन में क्या है, ये तो चौबे जानें, लेकिन टीम मोदी के लिए चौबे ने एक नई कब्र खोद दी है, मिट्टी उस पर कौन कौन डालेगा, आये दिन बदलते सियासी वक्त का इंतजार कीजिए।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार व राजनीतिक विश्लेषक हैं)

जाति की जंजीरे

आस्था पेशाब तक पिला देती है, जाति पानी तक नहीं पीने देती

प्रतीकात्मक चित्र

ै से लोग अंधभक्ति में बाबा की पेशाब को ?प्रसाद? मानकर पी सकते हैं, लेकिन जाति के नाम पर दलित व्यक्ति के छूने मात्र से पानी अपवित्र मान लिया जाता है। इन समस्याओं की जड़ें धर्म, राजनीति, शिक्षा और मीडिया की भूमिका में छिपी हैं। शिक्षा में विवेक की कमी, मीडिया की चुप्पी, धर्मगुरुओं की मनमानी और जातिवादी मानसिकता समाज को पिछड़ेपन की ओर ढकेल रही है। यह सवाल उठाता है कि यदि आस्था किसी बाबा की पेशाब को 'पवित्र' मान सकती है, तो एक दलित का पानी 'अपवित्र' कैसे हो सकता है?

प्रियंका सौरभ
स्तंभकार

भारत, जिसे आध्यात्मिकता और विविधता का देश कहा जाता है, अपने भीतर विरोधाभासों का एक ऐसा संसार छुपाए बैठा है जो कभी-कभी चौंका देता है। एक ओर हम विज्ञान, तकनीक, अंतरिक्ष और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस की बात करते हैं, वहीं दूसरी ओर सामाजिक और सांस्कृतिक परतों में आज भी मध्ययुगीन सोच जड़ें जमाए बैठी है। एक ही समाज में ऐसे दृश्य देखने को मिलते हैं जहां लोग किसी बाबा के चरणामृत को 'अमृत' मानकर पी जाते हैं, यहां तक कि गोमूत्र और गोबर को औषधि बताकर उसका सेवन करते हैं; और उसी समाज में एक दलित व्यक्ति के हाथ का पानी पीना 'पाप' मान लिया जाता है। यही वह विडंबना है जिसे इस तीखे वाक्य ने पूरी ताकत से उजागर किया है—'आस्था पेशाब तक पिला देती है, जाति पानी तक नहीं पीने देती।' यह पंक्ति महज एक व्यंग्य नहीं, बल्कि भारतीय समाज की गहराई से जमी हुई दो बड़ी बीमारियों की पहचान है- एक है अंधविश्वास में डूबी आस्था और दूसरी है जातिगत भेदभाव। दोनों ही एक हद तक इंसानियत, तर्कशक्ति और समानता के मूल सिद्धांतों को चुनौती देते हैं।

आस्थाः श्रद्धा और मूर्खता के बीच की पतली रेखा

आस्था किसी भी समाज की आध्यात्मिक और सांस्कृतिक रीढ़ होती है। यह इंसान को एक उद्देश्य देती है, उसे नैतिकता और आत्मबल प्रदान करती है। लेकिन जब यही आस्था तर्क, विज्ञान और मानवाधिकारों की सीमा लांघकर अंधश्रद्धा में बदल जाती है, तब वह खतरनाक रूप ले लेती है। भारत में ऐसे अनेक उदाहरण हैं जहां धर्मगुरुओं ने अपने अनुयायियों को गोमूत्र पीने, मल-मूत्र का सेवन करने, या स्वयं को 'भगवान' घोषित कर देने जैसे कृत्य करवाए और लोग आंख मूंदकर उनका पालन करते रहे। एक बाबा की 'चमत्कारी जल' के नाम पर अपनी पेशाब पिलाने की खबरें भी समय-समय पर सामने आती रही हैं। श्रद्धालु इसे 'आशीर्वाद' मानकर पीते हैं, और मीडिया जब इन घटनाओं पर सवाल उठाती है, तो आरोप लगाया जाता है कि वह धर्म का अपमान कर रही है। यह कैसी आस्था है जो इंसान को अपनी सोच और विवेक को पूरी तरह त्यागने को विवश कर देती है? यह कैसी श्रद्धा है जो सवाल उठाने वालों को अपराधी बना देती है?

जातिः एक आधुनिक समाज में मध्यकालीन सोच

अब बात करें उस दूसरी बड़ी सामाजिक बीमारी की—जातिवाद की। भारत में जाति एक ऐसी संरचना है जो जन्म के आधार पर व्यक्ति की सामाजिक हैसियत, पेशा, अधिकार और यहां तक कि जीवन-मरण के अवसर भी तय करती है। भारतीय संविधान ने भले ही जातिवाद को गैरकानूनी घोषित कर दिया हो, लेकिन सामाजिक मानसिकता में इसकी जड़ें आज भी उतनी ही गहरी हैं। आज भी देश के कई हिस्सों में दलितों को मंदिरों में प्रवेश नहीं मिलता, उनके लिए अलग कुएं या नल होते हैं, स्कूलों में उनके बच्चों को अलग बैठाया जाता है, और उनके स्पर्श मात्र से वस्तुएं 'अपवित्र' मानी जाती हैं। हाथ से मैला उठाने जैसी अमानवीय प्रथा आज भी समाप्त नहीं हुई है। ऐसे उदाहरण रोज सामने आते हैं जब दलित युवक को ऊंची जाति की लड़की से प्रेम करने के लिए मार दिया जाता है, या जब किसी गांव में सिर्फ इस वजह से उनके घरों में आग लगा दी जाती है कि उन्होंने 'मयार्दा' लांघी। यह कितना त्रासद है कि वही समाज जो गोमूत्र को औषधि मान सकता है, वह एक इंसान के छूने मात्र से पानी को अपवित्र मानता है।

प्रतीकात्मक चित्र

विरोधाभास की जड़ें

इस विरोधाभास की जड़ें कहीं और नहीं, बल्कि हमारी सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक संरचना में छिपी हुई हैं। धर्म के नाम पर आस्था को हथियार बनाकर लोगों की सोच को नियंत्रित किया गया। धर्मग्रंथों की मनमानी व्याख्याओं के जरिए एक वर्ग को 'ऊंचा' और दूसरे को 'नीचा' साबित किया गया। जो सवाल उठाए, वह 'धर्म विरोधी' करार दे दिया गया।

राजनीति ने भी इस व्यवस्था को खूब पोषित किया। जातियों को वोट बैंक में बदल दिया गया। आरक्षण के नाम पर नफरत फैलाई गई, लेकिन जातिगत अत्याचार को खत्म करने के लिए न ठोस प्रयास किए गए, न इच्छाशक्ति दिखाई गई। आस्था के नाम पर जनता को भावनात्मक रूप से बांधा गया, और वैज्ञानिक सोच को 'पश्चिमी विचारधारा' बताकर नकार दिया गया।

शिक्षा और विवेक की कमी

शिक्षा वह उपकरण है जो समाज को तर्कशील और न्यायप्रिय बनाता है। लेकिन भारत की शिक्षा व्यवस्था में तर्क और मानवाधिकार की शिक्षा बहुत सीमित है। हम बच्चों को विज्ञान पढ़ाते हैं, लेकिन उनकी सोच में वैज्ञानिक दृष्टिकोण नहीं भरते। हम उन्हें नैतिक शिक्षा देते हैं, लेकिन जातिवाद और सामाजिक न्याय के सवालों पर चुप रहते हैं। जब बच्चा स्कूल में यह देखता है कि उसके सहपाठी को 'चमार' या 'भंगी' कहा जा रहा है, जब शिक्षक ही छात्रों से जाति पूछते हैं, तो यह सोच उसकी चेतना में गहराई तक बैठ जाती है। यही बच्चा बड़ा होकर वही भेदभाव करता है, और एक बार फिर वह दुष्चक्र शुरू हो जाता है।

मीडिया और समाज का दोगलापन

मीडिया को लोकतंत्र का चौथा स्तंभ कहा जाता है, लेकिन जब बात जातिवाद या अंधविश्वास की आती है, तो उसका रुख या तो बेहद सतही होता है या पूरी तरह से चुप्पी ओढ़ लेता है। बाबाओं के चमत्कारों को वह 'मनोरंजन' के नाम पर दिखाता है, लेकिन किसी दलित की हत्या पर सिर्फ दो मिनट की रिपोर्ट चलाकर बात खत्म कर देता है। वह जानबूझकर ऐसे मुद्दों से बचता है जो उसे किसी 'विशेष वर्ग' से नाराज कर सकते हैं।

वहीं समाज भी अपनी सुविधानुसार संवेदनशीलता चुनता है। गोमूत्र बेचने वाले को 'आधुनिक ऋषि' कहा जाता है, लेकिन मैनहोल की सफाई करते मजदूर की मौत पर कोई आवाज नहीं उठती।

क्या है समाधान?

तर्कशील शिक्षा का विस्तारः स्कूलों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण और सामाजिक न्याय पर आधारित पाठ्यक्रम को शामिल किया जाना चाहिए। बच्चों को बचपन से यह सिखाना जरूरी है कि आस्था का मतलब अंधश्रद्धा नहीं होता, और हर इंसान समान है। सख्त कानून और उनका क्रियान्वयनः जाति आधारित भेदभाव के खिलाफ बने कानूनों को सिर्फ कागज पर नहीं, जमीन पर भी लागू करना होगा। दोषियों को सजा मिले, तभी समाज में बदलाव संभव है। मीडिया की ज़िम्मेदारीः मीडिया को इस विषय पर ईमानदार विमर्श शुरू करना चाहिए। दलितों के मुद्दों, जातिगत अन्याय और अंधविश्वास के खिलाफ सशक्त रिपोर्टिंग जरूरी है। धार्मिक संस्थाओं में सुधारः धर्मगुरुओं को अपने अनुयायियों को विज्ञान और सामाजिक समानता का संदेश देना चाहिए। अगर धर्म में परिवर्तन नहीं होगा, तो समाज में भी

प्रतीकात्मक चित्र

नहीं होगा। सिविल सोसायटी और युवाओं की भागीदारीः सामाजिक संगठनों, छात्रों और जागरूक नागरिकों को इस व्यवस्था के खिलाफ मिलकर आवाज उठानी होगी। सोशल मीडिया को एक सशक्त माध्यम बनाकर जातिवाद और अंधविश्वास के खिलाफ आंदोलन खड़ा किया जा सकता है।

क्या हम सच में आधुनिक हो पाए हैं?

भारत जब चंद्रमा पर पहुंचने की उपलब्धि का जश्न मना रहा होता है, तभी किसी गांव में एक दलित को मंदिर में प्रवेश करने पर पीट-पीट कर मार दिया जाता है। जब एक ओर सरकारी अभियान 'स्वच्छ भारत' का नारा देते हैं, वहीं दूसरी ओर हजारों सफाईकर्मी बिना सुरक्षा के गटर में उतरकर दम तोड़ते हैं। और जब एक ओर लोग बाबा की पेशाब को 'प्रसाद' मानकर पीते हैं, उसी समय एक दलित का छुआ पानी 'गंदा' मान लिया जाता है। यह विरोधाभास हमें यह सोचने पर मजबूर करता है कि क्या विकास सिर्फ इमारतें, मेट्रो और मोबाइल नेटवर्क तक सीमित है, या इसमें सोच, समानता और इंसानियत भी शामिल है? आस्था का स्थान महत्वपूर्ण है, लेकिन अगर वह इंसानियत को कुचलती है, तो वह किसी काम की नहीं। जाति की संरचना अगर किसी को उसका मानवाधिकार नहीं देती, तो वह टूटनी ही चाहिए। इसलिए आज की सबसे बड़ी जरूरत है कि हम इस पाखंड को पहचानें और उसके खिलाफ बोलें। आस्था अगर पेशाब तक पिला सकती है, तो समाज को इतना संवेदनशील और तर्कशील बनाना होगा कि जाति के नाम पर पानी से इनकार न किया जाए। इंसान की पहचान उसकी जाति से नहीं, उसके कर्म और चरित्र से हो-यही असली धर्म है, यही सच्ची आस्था

(ये लेखिका के अपने विचार हैं।)

प्रतीकात्मक चित्र

आज के भौतिकवादी और असहिष्णु समय में भगवान महावीर के विचार पहले से कहीं अधिक प्रासंगिक हैं। उन्होंने अहिंसा, सत्य, अपरिग्रह, अस्तेय और ब्रह्मचर्य जैसे सिद्धांतों के माध्यम से आत्म-शुद्धि और सामाजिक सद्भाव का मार्ग दिखाया। उनके विचार उपभोक्तावाद, हिंसा, पर्यावरण विनाश और नैतिक पतन जैसी समकालीन समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करते हैं। महावीर का दर्शन केवल एक धार्मिक मत नहीं, बल्कि एक सार्वभौमिक जीवनशैली है जो हर मानव को करुणा, संयम और आत्मानुशासन की राह पर चलने को प्रेरित करता है। ऐसे में आज की दुनिया को उनके सिद्धांतों की सख्त जरूरत है।

भगवान महावीर के विचारों की प्रासंगिकता

डॉ सत्यवान सौरभ

आज का युग तकनीकी उन्नति, वैज्ञानिक प्रगति और भौतिक समृद्धि का प्रतीक बन चुका है। लेकिन इस विकास के शोरगुल में कहीं मनुष्य का नैतिक और आत्मिक पक्ष दबता जा रहा है। मनुष्य ने चाँद पर बस्तियाँ बसाने की तैयारी कर ली है, परंतु पृथ्वी पर जीवन की गरिमा और करुणा को बनाए रखना दिन-ब-दिन चुनौतीपूर्ण होता जा रहा है। ऐसे समय में भगवान महावीर के विचार न केवल मार्गदर्शक सिद्धांत हैं, बल्कि एक चेतावनी भी हैं झ कि अगर हमने आत्मनियंत्रण, अहिंसा और सहअस्तित्व की राह नहीं अपनाई, तो यह प्रगति भी विनाश का कारण बन सकती है।

महावीर का जीवनः त्याग और तपस्या की मिसाल

भगवान महावीर का जीवन ही उनके सिद्धांतों का जीवंत उदाहरण है। एक राजकुमार होकर भी उन्होंने भौतिक सुखों का त्याग कर सत्य की खोज में तपस्या का मार्ग चुना। उन्होंने आत्मा की शुद्धता, सत्य की अनुभूति और मोक्ष प्राप्ति के लिए कठोर साधना की। उनका जीवन इस बात का प्रमाण है कि आत्मिक शांति बाहरी भौतिकताओं में नहीं, बल्कि आत्मानुशासन और करुणा में निहित है।

अहिंसाः आज की सबसे बड़ी जरूरत

महावीर स्वामी का सबसे महत्वपूर्ण संदेश था – अहिंसा परमो धर्मः। आज, जब समाज धार्मिक असहिष्णुता, जातीय हिंसा, लैंगिक अपराध, युद्धों और आतंकवाद की चपेट में है, तब यह संदेश एक प्रकाश स्तंभ की भाँति मार्गदर्शन करता है। अहिंसा केवल शारीरिक हिंसा का विरोध नहीं, बल्कि विचारों, शब्दों और व्यवहार में भी करुणा का समावेश है।

आज सोशल मीडिया के माध्यम से फैलती नफरत, ट्रोलिंग, और वैचारिक कट्टरता के दौर में यदि हम महावीर की अहिंसा को अपनाएं, तो समाज में सहिष्णुता, संवाद और समझदारी को बढ़ावा मिल सकता है।

अपरिग्रहः उपभोक्तावाद के विरुद्ध एक चेतावनी

महावीर ने अपरिग्रह यानी संग्रह की प्रवृत्ति से दूर रहने का उपदेश दिया। आज का उपभोक्तावादी समाज ₹और चाहिए₹ की मानसिकता में जकड़ा है – अधिक धन, अधिक संपत्ति, अधिक उपभोग। लेकिन इसी लालसा ने पर्यावरण को प्रदूषित किया, सामाजिक असमानता बढ़ाई, और मानसिक तनाव को जन्म दिया।

अपरिग्रह का अर्थ है – आवश्यकताओं तक सीमित रहना, अनावश्यक संग्रह से बचना, और जीवन को सरल बनाना। यदि हम इस सिद्धांत को अपनाएं, तो न केवल पर्यावरण की रक्षा संभव है, बल्कि जीवन की गुणवत्ता में भी सुधार होगा।

सत्य और अस्तेयः नैतिक मूल्यों का क्षरण रोकने का उपाय

आज राजनीति से लेकर कॉर्पोरेट जगत तक, झूठ और छल की नीति एक आम चलन बन गई है। तथाकथित ₹स्मार्टनेस₹ का मतलब अब चालाकी और नैतिकता से समझौता करना हो गया है। लेकिन महावीर का सिद्धांत था – सत्य बोलो और चोरी न करो।

आज जब फेक न्यूज, धोखाधड़ी, और अनैतिक व्यवहार समाज का हिस्सा बन चुके हैं, तब सत्य और अस्तेय का पालन ही हमें नैतिक रूप से पुनः ऊँचाई पर ले जा सकता है। यह व्यक्तिगत आचरण से लेकर राष्ट्रीय चरित्र तक का निर्माण करता है।

ब्रह्मचर्य : आत्मसंयम और मानसिक शुद्धि का मार्ग

ब्रह्मचर्य को आज सिर्फ एक धार्मिक सिद्धांत मानकर छोड़ दिया गया है, जबकि महावीर के अनुसार यह आत्म-नियंत्रण और मानसिक शुद्धता का साधन है। आज की पीढ़ी इंटरनेट, मनोरंजन और तात्कालिक सुखों के आभासी संसार में आत्मविस्मृति की ओर बढ़ रही है।

ब्रह्मचर्य का आशय यहां केवल यौन संयम से नहीं है, बल्कि समग्र इंद्रिय-नियंत्रण से है। जब मनुष्य अपने इच्छाओं पर नियंत्रण करना सीख जाता है, तभी वह सच्चे अर्थों में स्वतंत्र होता है।

समवेदना और जीवदयाः पर्यावरण और प्राणी मात्र के लिए सहअस्तित्व

महावीर का संदेश केवल मनुष्यों तक सीमित नहीं था। उन्होंने समस्त प्राणियों के प्रति करुणा और दया की बात कही। आज जब हम जंगलों को काट कर विकास की सीढ़ियाँ चढ़ रहे हैं, जानवरों के आवास छीन रहे हैं, और पर्यावरण को विनाश की ओर ले जा रहे हैं – तब यह संदेश हमारी चेतना को झकझोरता है।

जीवदया न केवल अहिंसा की भावना है, बल्कि यह पर्यावरणीय संतुलन और पारिस्थितिकी की रक्षा का आधार भी है। महावीर के सिद्धांतों को अपनाना, एक हरित, टिकाऊ और सह-अस्तित्व पर आधारित दुनिया के निर्माण की ओर कदम है।

मानवाधिकार, न्याय और सामाजिक समानता

आज जब दुनिया जाति, लिंग, धर्म, और आर्थिक असमानता की खाई में उलझी है, तब महावीर का यह विश्वास कि हर जीव आत्मा है और हर आत्मा समान है – सामाजिक न्याय का सशक्त आधार बन सकता है। जैन दर्शन में किसी को नीच या उच्च नहीं माना जाता; सबको मोक्ष का अधिकार है। यही भावना आज के सामाजिक आंदोलनों और मानवाधिकार की मांगों की आत्मा हो सकती है।

आध्यात्मिकता बनाम धर्म का दिखावा

आज धार्मिकता का मतलब पूजा-पाठ, कर्मकांड और बाहरी प्रदर्शन रह गया है, जबकि महावीर की शिक्षाएं आंतरिक शुद्धि और आत्मा की मुक्ति की ओर इंगित करती हैं। धर्म को यदि आडंबरों से निकालकर आत्मा की यात्रा के रूप में देखा जाए, तो यह समाज में पाखंड को खत्म करने का उपाय बन सकता है।

भगवान महावीर के विचार किसी कालखंड तक सीमित नहीं हैं। वे सार्वकालिक हैं – हर युग, हर समाज, हर मनुष्य के लिए। आज का दौर, जिसमें मानसिक तनाव, सामाजिक हिंसा, और नैतिक पतन चरम पर है, वहां महावीर की शिक्षाएं एक समाधान के रूप में सामने आती हैं।

हमें यह समझना होगा कि महावीर का दर्शन केवल जैन धर्म के अनुयायियों के लिए नहीं, बल्कि समस्त मानवता के लिए है। उनकी शिक्षाओं को अपनाकर हम एक अधिक सहिष्णु, करुणामय, न्यायसंगत और संतुलित समाज की नींव रख सकते हैं।

ज्योतिबा फुले का भारत बनाना अभी बाकी

प्रियंका सौरभ

फुले केवल उन्नीसवीं सदी के समाज सुधारक नहीं थे, बल्कि वे आज भी जाति, लिंग और वर्ग आधारित असमानताओं के खिलाफ एक जीवंत विचारधारा हैं। उन्होंने शिक्षा को सामाजिक समानता का हथियार बनाया, महिलाओं और दलितों के लिए स्कूल खोले, और ब्राह्मणवादी सत्ता संरचना को खुली चुनौती दी। आज भी जब शिक्षा का बाजारीकरण, महिलाओं के साथ हिंसा, और जातिगत भेदभाव समाज में मौजूद है, तब फुले की शिक्षाएं और भी अधिक जरूरी हो जाती हैं। फुले का स्थापित 'सत्यशोधक समाज' आज की ध्रुवीकृत राजनीति और जाति-धर्म के नाम पर वोटबैंक बनाने वाले माहौल के लिए एक वैकल्पिक रास्ता हो सकता है। क्या हम फुले को सिर्फ जयंती के दिन याद करेंगे, या उनके विचारों को नीति, समाज और शिक्षा व्यवस्था में साकार रूप देंगे।

जब आज का भारत तकनीक, विज्ञान और अंतरिक्ष में नए कीर्तिमान स्थापित कर रहा है, वहीं सामाजिक विषमता, जातिगत भेदभाव और लैंगिक असमानता अब भी हमारे समाज की हकीकत है। ऐसे समय में ज्योतिराव फुले जैसे विचारकों की शिक्षाएं केवल ऐतिहासिक दस्तावेज नहीं हैं, बल्कि आज के लिए जरूरी दिशानिर्देश हैं। आधुनिक भारत में यदि हमें वास्तव में एक समानतावादी और न्यायप्रिय समाज बनाना है, तो हमें फुले के विचारों को केवल स्मृति में नहीं, बल्कि नीति और व्यवहार में उतारना होगा।

एक क्रांतिकारी विचारक की विरासत

ज्योतिबा फुले केवल एक समाज सुधारक नहीं थे; वे एक द्रष्टा थे जिन्होंने भारत के सामाजिक ताने-बाने में फैली अस्पृश्यता, पितृसत्ता और ब्राह्मणवादी वर्चस्व को चुनौती दी। उन्होंने देखा कि शिक्षा, धर्म और परंपरा का उपयोग कैसे एक विशेष वर्ग के हितों की रक्षा के लिए किया गया है। यही कारण था कि उन्होंने शिक्षा को सामाजिक क्रांति का हथियार बनाया। फुले ने कहा था-'अगर आप लोगों को शिक्षित नहीं करते, तो आप उनके साथ धोखा कर रहे हैं।'

यह वाक्य आज भी भारतीय शिक्षा प्रणाली पर एक कटु टिप्पणी है, जहाँ शिक्षा का बाजारीकरण हो चुका है, और वंचित तबकों के लिए गुणवत्तापूर्ण शिक्षा अब भी एक सपना बनी हुई है।

आज की शिक्षा और फुले की दृष्टि

आज, जब शिक्षा महंगे निजी स्कूलों और कोचिंग संस्थानों की बपौती बन चुकी है, तो फुले का यह सपना अधूरा प्रतीत होता है कि हर बच्चे को समान और निःशुल्क शिक्षा मिले। उन्होंने पहली बार लड़कियों और दलित बच्चों के लिए स्कूल खोले, जबकि आज भी कई क्षेत्रों में लड़कियों की शिक्षा को लेकर समाज में संकोच बना हुआ है। फुले की सोच थी कि शिक्षा वह चाबी है जो समाज के हर ताले को खोल सकती है। क्या आज का भारत इस चाबी का सही उपयोग कर रहा है, या उसे केवल अमीरों की तिजोरी में कैद कर दिया गया है?

जाति का दंश और लोकतंत्र की खोखली नींव

फुले का सबसे बड़ा योगदान था झ जातिवाद के खिलाफ विचार की वैचारिक क्रांति। उन्होंने ब्राह्मणवादी वर्चस्व पर तीखा प्रहार किया और बताया कि धर्म का उपयोग कैसे सत्ता और शोषण के औजार के रूप में किया जाता है। आज भी भारत में जातिगत हिंसा, आरक्षण के विरोध और

सामाजिक भेदभाव के असंख्य उदाहरण मिलते हैं। फुले ने जिन शूद्रों और अतिशूद्रों के अधिकारों की बात की थी, आज भी वही वर्ग सफाई कर्मचारी, भूमिहीन मजदूर, और निम्न वर्गीय कार्यों में सिमटे हुए हैं। क्या यह लोकतंत्र का मखौल नहीं है कि 75 साल बाद भी जाति हमारे पेशे, रिश्ते और न्याय तक को प्रभावित करती है?

महिलाओं की स्थितिः कितनी बदली, कितनी स्थिर?

सावित्रीबाई फुले को पढ़ाने से लेकर उन्हें भारत की पहली महिला शिक्षिका बनाने तक का सफर सिर्फ एक पति-पत्नी की कहानी नहीं, बल्कि समानता के संघर्ष की गाथा है। लेकिन क्या आज की महिलाएं सुरक्षित और सशक्त महसूस कर रही हैं? आज भी महिलाओं को निर्णय लेने की स्वतंत्रता, समान वेतन, और सामाजिक सुरक्षा के लिए संघर्ष करना पड़ता है। दहेज, बलात्कार, घरेलू हिंसा, और बाल विवाह जैसे अपराध आज भी हमारे समाज में मौजूद हैं।

ऐसे में फुले की यह सोच कि- 'कोई समाज तब तक उन्नति नहीं कर सकता, जब तक उस्की महिलाएं शिक्षित और स्वतंत्र नहीं होतीं,' पूरी तरह आज भी प्रासंगिक है।

सत्यशोधक समाज और आज की राजनीति

1873 में स्थापित सत्यशोधक समाज केवल एक संगठन नहीं, बल्कि एक आंदोलन था- सत्य की खोज और सामाजिक समानता की दिशा में। इस संगठन ने बिना किसी धार्मिक कर्मकांड के विवाह करवाए, जातिविहीन समाज की वकालत की और श्रमिकों, किसानों तथा महिलाओं को संगठित किया।

आज जब राजनीति जाति और धर्म के नाम पर ध्रुवीकरण करती है, सत्यशोधक समाज का आदर्श एक वैकल्पिक राजनीतिक सोच प्रदान कर सकता है। राजनीति को सेवा के बजाय सत्ता का माध्यम बना दिया गया है, जबकि फुले सत्ता को सेवा और समानता का साधन मानते थे।

फुले का साहित्य और आज की मीडिया

फुले के ग्रंथ जैसे 'गुलामगिरी' और 'तृतीय रत्न' आज भी सामाजिक अन्याय के खिलाफ मजबूत दर्पण हैं। उन्होंने लिखा, बोला और संघर्ष किया। आज का मीडिया जिस तरह सेलिब्रिटी, सनसनी और साजिशों की कहानियों में उलझा हुआ है, फुले का लेखन उसके लिए एक जागरूकता का पाठ हो सकता है।

क्या मीडिया कभी यह सवाल उठाता है कि गांवों में आज भी दलितों को मंदिरों में घुसने नहीं दिया जाता? कि क्यों आदिवासी इलाकों में स्कूल और अस्पताल नहीं पहुंचते? या कि क्यों महिलाएं रात को अकेली बाहर निकलने में डरती हैं?

फुले का विचार मीडिया से एक संवैधानिक जिम्मेदारी निभाने की अपेक्षा रखता है—सिर्फ खबरें नहीं, जागरूकता और बदलाव का बीज बोना।

नया भारत और फुले का सपना

॰नया भारत॰ की बातें तो खूब होती हैं, लेकिन फुले के सपनों का भारत अभी अधूरा है। ऐसा भारत, जहां जाति जन्म से तय न हो, जहां धर्म मनुष्य को जोड़ने का काम करे, तोड़ने का नहीं; जहाँ महिला और पुरुष दोनों समान अवसरों के अधिकारी हों; और जहां शिक्षा सिर्फ अमीरों की वस्तु न हो। फुले ने जो बीज बोया था, वह पेड़ बन चुका है, लेकिन उसकी छांव अब भी हर किसी तक नहीं पहुंच पाई है। आज ज्योतिबा फुले हमारे बीच नहीं हैं, लेकिन उनके विचार हमारे वर्तमान के आईने हैं। हमें यह तय करना है कि हम उनके जन्मदिन को केवल श्रद्धांजलि और मूर्तियों तक सीमित रखते हैं या उनके विचारों को नीति, शिक्षा, राजनीति और समाज के हर क्षेत्र में उतारते हैं। फुले का भारत कोई सपना नहीं था, वह एक चेतना थी—जिसे हमें आज के भारत में जीवित रखना होगा।

प्राइवेट सिस्टम का खेल

डॉ. सत्यवान सौरभ
वरिष्ठ स्तंभकार, हरियाणा

आम आदमी की जेब पर हमला

भारत एक ऐसा देश है जहाँ शिक्षा और स्वास्थ्य को बुनियादी अधिकार माना जाता है। लेकिन जब यही अधिकार एक व्यापार का रूप ले लें, तो आम आदमी की जिंदगी में यह अधिकार बोझ बन जाते हैं। आज के दौर में प्राइवेट स्कूल और प्राइवेट हॉस्पिटल सुविधाओं के नाम पर ऐसी व्यवस्था खड़ी कर चुके हैं जो आम नागरिक की जेब पर सीधा हमला करती है। यह हमला सिर्फ आर्थिक नहीं, मानसिक और सामाजिक भी है।

शिक्षा या व्यापार?

प्राइवेट स्कूलों की बात करें तो अब ये शिक्षण संस्थान कम और फाइव स्टार होटल ज्यादा लगते हैं। स्कूल में दाखिले के लिए लाखों की डोनेशन, एडमिशन फीस, एनुअल चार्जेस, ड्रेस, किताबें, जूते, बस फीस झ हर चीज में अलग-अलग मदों के नाम पर वसूली होती है। किताबें स्कूल के किसी ह्यअधिकृत वेंडरह्ल से ही खरीदनी होती हैं, जिनका मूल्य बाजार दर से दोगुना होता है क्योंकि उसमें स्कूल का कमीशन जुड़ा होता है। स्कूल यूनिफॉर्म भी उन्हीं से लेनी पड़ती है, जो आम बाजार में मिलती ही नहीं।

यह सब इसलिए नहीं कि अभिभावक इन सुविधाओं की मांग करते हैं, बल्कि इसलिए क्योंकि स्कूलों ने इसे ह्यअनिवार्यह्ल बना दिया है। पढ़ाई नाम की चीज अब कक्षा में कम और कोचिंग संस्थानों में ज्यादा होती है झ और दिलचस्प बात ये है कि उन कोचिंग संस्थानों के मालिक भी कई बार उन्हीं स्कूल संचालकों से जुड़े होते हैं। बच्चा दिनभर स्कूल, फिर कोचिंग, फिर होमवर्क, और फिर ट्यूशन झ खुद के लिए ना समय, ना सोच, ना बचपन।

इन सबका उद्देश्य एक ही होता है झ '99% लाओ'। और जब ये नंबर नहीं आते, तो बच्चे हीन भावना से ग्रस्त हो जाते हैं। अभिभावक दूसरों के बच्चों से तुलना करने लगते हैं, और ये पूरी प्रक्रिया मानसिक उत्पीड़न में बदल जाती है।

स्वास्थ्य का नाम, व्यापार का काम

अब अगर शिक्षा में ये स्थिति है, तो स्वास्थ्य क्षेत्र उससे भी भयावह है। प्राइवेट हॉस्पिटल्स का ढांचा अब इलाज से ज्यादा 'कमाई' पर केंद्रित हो गया है। अस्पताल में घुसते ही 'पर्ची' कटती है, फिर तरह-तरह की जाँचें, महंगी दवाइयां और 'एडवांस पेमेंट' की मांग ः और वो भी बिना यह बताए कि मरीज की स्थिति क्या है।

सामान्य सर्दी-खांसी या बुखार को भी डॉक्टर ऐसा बताते हैं मानो जीवन संकट में हो। डर दिखाकर लोगों को लंबी दवाओं और भर्ती की सलाह दी जाती है। मरीज ठीक भी हो जाए, तब भी बिल देखकर परिवार बीमार हो जाता है। जो दवा बाहर 10 रुपए में मिलती है, वही अस्पताल के बिल में 200 से 300 रुपए की होती है।

यहां तक कि मौत के बाद भी लाश को एक-दो दिन रोककर 'मचुर्री चार्जेस', 'फ्रीजर चार्जेस' आदि के नाम पर अंतिम सांस तक पैसा वसूला जाता है। यह एक क्रूर मजाक है उस परिवार के साथ जो पहले ही अपनों को खो चुका होता है।

सरकार की चुप्पी क्यों?

इस लूट का सबसे दुखद पहलू यह है कि यह सब किसी को छिपकर नहीं करना पड़ता झ सब कुछ खुलेआम होता है। अखबार, सोशल मीडिया,

न्यूज चैनल : हर जगह यह मुद्दा उठता है। हर साल प्राइवेट स्कूलों की फीस बढ़ोतरी और हॉस्पिटल बिलों पर शोर होता है, लेकिन हर बार यह शोर धीरे-धीरे दबा दिया जाता है।

क्यों? क्योंकि अधिकतर प्राइवेट स्कूल, कॉलेज, हॉस्पिटल : इन सबके पीछे किसी ना किसी नेता का हाथ होता है। चाहे वह सत्ता पक्ष का हो या विपक्ष का झ सिस्टम में बैठे अधिकतर लोग कहीं ना कहीं इस खेल में हिस्सेदार होते हैं। नियम-कानून बनते हैं, लेकिन उन पर अमल नहीं होता।

आरटीई (शिक्षा का अधिकार कानून), सीजीएचएस (स्वास्थ्य सुविधा योजना), नैशनल मेडिकल काउंसिल : ये सब नाम भर हैं, जिनका प्रयोग प्रचार में होता है, न कि आम आदमी को राहत देने में।

मध्यम वर्ग की त्रासदी

गरीबों के लिए सरकार कभी-कभी योजनाएं बना देती है, अमीरों को कोई चिंता नहीं, लेकिन सबसे ज्यादा पिसता है मध्यम वर्ग। न उसे सरकारी स्कूल में भेजना गवारा होता है, न सरकारी अस्पताल में जाना। मजबूरी में वह प्राइवेट विकल्प चुनता है, और फिर उसी जाल में फंस जाता है : एक ऐसा जाल जिसमें न कोई नियंत्रण है, न कोई जवाबदेही।

मध्यम वर्ग न तो सड़क पर उतरता है, न ही आंदोलन करता है। वह हर महीने अपनी जेब काटकर एटकदेता है, स्कूल की फीस चुकाता है, हॉस्पिटल के बिल भरता है, और बस यही सोचता है - 'और कोई रास्ता भी तो नहीं है।'

समाधान की संभावनाएं

अगर वास्तव में इस समस्या से निपटना है, तो कुछ ठोस कदम उठाने होंगे। निजी संस्थानों की पारदर्शिता : स्कूलों और अस्पतालों को अपने शुल्क और सेवाओं की जानकारी सार्वजनिक रूप से वेबसाइट और नोटिस बोर्ड पर लगानी चाहिए। एक स्वतंत्र नियामक संस्था होनी चाहिए जो फीस और सेवा की गुणवत्ता की निगरानी करे। एक ऐसी प्रणाली जहां आम नागरिक अपनी शिकायत दर्ज कर सके और उसका समाधान समयबद्ध तरीके से हो। यह सुनिश्चित किया जाए कि किसी भी राजनीतिक व्यक्ति या उनके परिवार का हित इन संस्थानों से ना जुड़ा हो। जब तक आम जनता एकजुट होकर आवाज नहीं उठाएगी, तब तक यह लूट का सिलसिला चलता रहेगा।

शिक्षा और स्वास्थ्य कोई 'सेवा' नहीं रह गई है : यह अब एक 'सर्विस' है, जिसका मूल्य तय होता है आपकी जेब देखकर। यह स्थिति किसी भी संवेदनशील और लोकतांत्रिक समाज के लिए शर्मनाक है। जब तक हम खुद नहीं जागेंगे, आवाज नहीं उठाएंगे, और सिस्टम से जवाबदेही नहीं माँगेंगे झ तब तक यह प्राइवेट सिस्टम हमें ऐसे ही लूटता रहेगा।

हमें यह समझना होगा कि दिखावे की दौड़ में शामिल होकर हम अपने बच्चों का बचपन, अपने परिवार की शांति, और अपने भविष्य की स्थिरता दांव पर लगा रहे हैं। यह समय है सवाल पूछने का, व्यवस्था को आईना दिखाने का : वरना जेब तो जाएगी ही, आत्मसम्मान भी खो जाएगा।

प्रतीकात्मक चित्र

सुप्रीम कोर्ट के फैसले के बाद राज्यपाल विधेयकों को नहीं रोकेगें?

सुप्रीम कोर्ट के जस्टिस जे.बी. पारदीवाला और आर. महादेवन की बेंच ने तमिलनाडु सरकार बनाम तमिलनाडु के राज्यपाल (आर एन रवि) मामले में यह फैसला दिया है। कोर्ट ने कहा कि राज्यपाल के पास राज्य विधानसभा की तरफ से भेजे गए विधेयकों पर वीटो का अधिकार नहीं है। वे किसी बिल को अनिश्चितकाल के लिए रोक नहीं सकते। जस्टिस जे.बी. पारदीवाला और जस्टिस आर. महादेवन की पीठ ने कहा कि संविधान के अनुच्छेद 200 के तहत राज्यपाल के पास कोई विवेकाधिकार नहीं है और उन्हें मंत्रिपरिषद की सहायता और सलाह पर अनिवार्य रूप से कार्य करना होता है। सुप्रीम कोर्ट की बेंच ने कहा था कि राज्यपाल सहमति को रोककर 'पूर्ण वीटो' या 'आंशिक वीटो' (पॉकेट वीटो) की अवधारणा को नहीं अपना सकते।

▸▸ रामस्वरूप रावतसरे
वरिष्ठ स्तंभकार

शीर्ष अदालत के अनुसार राज्य विधानसभा द्वारा विधेयक को पुनः पारित किए जाने के बाद उसे पेश किए जाने पर राज्यपाल को एक महीने की अवधि में विधेयकों को मंजूरी देनी होगी। राज्यपाल के पास कोई विवेकाधिकार नहीं है। संविधान के अनुच्छेद 200 के तहत राज्यपाल द्वारा अपने कार्य निर्वहन के लिए कोई स्पष्ट समय सीमा निर्धारित नहीं है। सुप्रीम कोर्ट ने तमिलनाडु विधानसभा से पास किए गए 10 लंबित विधेयकों को राज्यपाल ने मंजूर कर लिया है। कोर्ट ने भविष्य के सभी विधेयकों पर कार्रवाई के लिए समय सीमा भी तय कर दी है। संविधान के अनुच्छेद 200 में यह प्रावधान नहीं था।

जानकारी के अनुसार तमिलनाडु सरकार और राज्यपाल के बीच काफी समय से विवाद चल रहा था। राज्यपाल विधानसभा से पास किए गए विधेयकों को मंजूरी देने में देरी कर रहे थे। कुछ बिल तो 2020 से ही लंबित थे। ज्यादातर बिलों में राज्यपाल को विश्वविद्यालयों के चांसलर के तौर पर मिलने वाले अधिकारों को कम करने की बात थी। इससे राज्यपाल और सरकार के बीच टकराव बढ़ गया था। आरोप लगाया जाता है कि राज्यपाल जानबूझकर विधायी प्रक्रिया को रोकने की कोशिश करते हैं। तमिलनाडु ही नहीं, छत्तीसगढ़, हरियाणा, बंगाल और केरल जैसे राज्यों में भी राज्यपालों के साथ ऐसे ही विवाद हुए। पुडुचेरी में भी एलजी (लेफ्टिनेंट गवर्नर) और सरकार के बीच मतभेद थे। तेलंगाना, पंजाब और केरल के राज्यपाल भी लंबित विधेयकों को पास नहीं करने के कारण कोर्ट में गए।

संविधान के अनुच्छेद 153 में हर राज्य के लिए एक राज्यपाल का प्रावधान है। अनुच्छेद 154 के तहत कार्यकारी शक्तियां राज्यपाल के पास होती हैं लेकिन संविधान में उनकी भूमिका और शक्ति सीमित है। अनुच्छेद 163(1) के अनुसार, राज्यपाल को अपने मंत्रिपरिषद की सलाह पर काम करना होता है। संविधान में राज्यपाल को कुछ मामलों में अपने विवेक से काम करने की शक्ति दी गई है लेकिन, यह शक्ति भी सीमित है। सुप्रीम कोर्ट ने 1974 में शमशेर सिंह बनाम पंजाब राज्य मामले में फैसला दिया था कि राज्यपाल सिर्फ एक संवैधानिक प्रमुख हैं। राज्य की कार्यकारी शक्तियां वास्तव में मंत्रिपरिषद द्वारा इस्तेमाल की जाती हैं।

अनुच्छेद 200 के मुताबिक विधानसभा के पास किए गए सभी विधेयकों को राज्यपाल की मंजूरी चाहिए होती है। राज्यपाल के पास चार विकल्प होते हैं- विधेयक को मंजूरी देना, मंजूरी रोकना, विधेयक को राष्ट्रपति के विचार के लिए आरक्षित रखना या विधेयक को पुनर्विचार के लिए विधानसभा को वापस भेजना। यह अनुच्छेद भारत सरकार अधिनियम, 1935 की धारा 75 पर आधारित है। इसमें इन विकल्पों का इस्तेमाल करने के लिए कोई समय सीमा नहीं दी गई है।

सरकारिया आयोग (1987), राष्ट्रीय संविधान समीक्षा आयोग (2002) जिसके अध्यक्ष जस्टिस वेंकटचलैया थे, और जस्टिस एम.एम. पुंछी आयोग (2010) ने सिफारिश की थी कि राज्यपालों को विधेयकों पर फैसला लेने के लिए एक समय सीमा तय की जानी चाहिए। कर्नाटक विधि आयोग की 22वीं रिपोर्ट विधेयकों पर सहमति-देरी की समस्याएं (भारत के संविधान के अनुच्छेद 200 और 201) में जस्टिस वी.एस. मलीमठ ने कहा था कि यह अजीब होगा कि राज्य के प्रमुख को एक विधेयक पर सहमति देने में उतना ही समय लगे जितना

कि विधानसभा को उसे पास करने में लगता है। यह अच्छी तरह से स्थापित है कि हर राज्य कार्रवाई उचित होनी चाहिए। शक्ति का उचित प्रयोग एक उचित समय के भीतर किया जाना चाहिए। ऐसा न करना अनुचित होगा।

सुप्रीम कोर्ट के अनुसार राज्यपाल किसी भी बिल को हमेशा के लिए नहीं रोक सकते। उन्हें बिल पर फैसला लेना ही होगा। कोर्ट ने तमिलनाडु को कहा कि उन्हें बिलों को जल्दी पास करना चाहिए। कई राज्यों में राज्यपाल और सरकार के बीच झगड़ा चल रहा है। राज्यपाल बिलों को पास करने में देरी करते हैं जिससे सरकार का काम रुक जाता है। सुप्रीम कोर्ट ने अब इस पर लगाम लगा दी है। संविधान में लिखा है कि राज्यपाल को सरकार की सलाह पर काम करना चाहिए लेकिन, कई बार राज्यपाल अपनी मनमानी करते हैं। सुप्रीम कोर्ट ने कहा है कि यह गलत है। राज्यपाल को संविधान के हिसाब से चलना चाहिए। आयोगों ने भी कहा है कि राज्यपाल को बिलों पर फैसला लेने के लिए एक समय सीमा होनी चाहिए। इससे सरकार का काम आसानी से चलेगा।

पिछले 40 वर्षों (1985 से 2025 तक) में भारत में कई राज्यपाल ऐसे रहे हैं जिनके कार्यों ने राज्यों के साथ विवादों को जन्म दिया। ये विवाद अक्सर विधायी देरी, राज्य सरकारों के साथ टकराव, या संवैधानिक सीमाओं के कथित उल्लंघन से जुड़े रहे। नीचे कुछ प्रमुख राज्यपालों की सूची दी गई है जिन्हें उनके कार्यकाल के दौरान विवादों के लिए जाना गया।

केरल के राज्यपाल और सरकार के बीच मनमुटाव का मामला काफी विवादों में रहा था। केरल के तत्कालीन राज्यपाल आरिफ मोहम्मद खान ने कहा था कि केरल सरकार कई ऐसे काम करती है जो कानून के मुताबिक नहीं होते। दरअसल एपीजे अब्दुल कलाम प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय (केटीयू) के कुलपति का चयन करने के लिए कुलाधिपति के नामित व्यक्ति के बिना चयन समिति बनाने को लेकर आरिफ मोहम्मद नाराज थे। उन्होंने कहा था कि सरकार पर निर्भर करता है कि वे क्या करना चाहते हैं। वे कई ऐसे काम कर रहे हैं जो कि कानून के मुताबिक नहीं हैं। राज्य के विश्वविद्यालयों में कुलपतियों सहित नियुक्तियों के मुद्दे पर आरिफ मोहम्मद खान और केरल सरकार लंबे अरसे तक आमने-सामने थे।

इसी प्रकार उत्तर प्रदेश के राज्यपाल रोमेश भंडारी के एक विवादित निर्णय से जुड़ा है, जो 1998 में हुआ था। राज्यपाल रोमेश भंडारी ने मध्यरात्रि में उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री कल्याण सिंह को पद से हटा दिया और जगदंबिका पाल को नए मुख्यमंत्री के रूप में शपथ दिला दी। सुप्रीम कोर्ट ने बाद में राज्यपाल के निर्णय को अवैध घोषित किया और कल्याण सिंह को बहाल कर दिया। इस घटना ने उत्तर प्रदेश की राजनीति में एक बड़ा विवाद पैदा कर दिया और राज्यपाल की शक्तियों पर प्रश्नचिन्ह उठाया।

ऐसा ही मामला बिहार के राज्यपाल बूटा सिंह के इस्तीफे से जुड़ा है, जो 2005 में बिहार विधानसभा के विघटन से संबंधित एक मामले में सुप्रीम कोर्ट द्वारा फटकार लगाए जाने के बाद हुआ था। 2005 में बिहार विधानसभा को भंग कर दिया गया था, जिसे बाद में सुप्रीम कोर्ट ने असंवैधानिक करार दिया। राज्यपाल बूटा सिंह पर आरोप लगा कि उन्होंने केंद्र सरकार को गलत जानकारी दी, जिसके आधार पर विधानसभा को भंग किया गया था। सुप्रीम कोर्ट ने बूटा सिंह की भूमिका की आलोचना की और कहा कि उन्होंने केंद्र सरकार को गलत जानकारी दी।

हंसराज भारद्वाज के राज्यपाल कार्यकाल के दौरान कई विवाद हुए जिनमें से कुछ प्रमुख इस प्रकार हैं। केंद्रीय कानून मंत्री वीरप्पा मोइली ने कर्नाटक के राज्यपाल हंसराज भारद्वाज के एक निर्देश को सही ठहराया जिसमें राज्यपाल ने विधानसभा अध्यक्ष केजी बोपय्या को निर्देश दिए थे। इस निर्देश के बारे में कुछ लोगों ने सवाल उठाए थे।

कमला बेनीवाल राज्यपाल विवाद 2009-2014 के बीच हुआ, जब उन्होंने गुजरात, त्रिपुरा और मिजोरम के राज्यपाल के रूप में कार्य किया। इस दौरान, उनका तत्कालीन मुख्यमंत्री नरेंद्र मोदी के साथ कई मुद्दों पर टकराव हुआ। कमला बेनीवाल ने राज्यपाल रहते हुए आरए मेहता को लोकायुक्त नियुक्त किया जिसे गुजरात सरकार ने विवादित माना। उनका नरेंद्र मोदी के साथ कई मुद्दों पर टकराव हुआ जो राष्ट्रीय स्तर पर चर्चा में रहा।

बंगाल में सीएम ममता और राज्यपाल जगदीप धनखड़ के बीच विवाद काफी चर्चा में रहा है। दोनों कई मुद्दों पर टकराते रहे हैं। जगदीप धनखड़ जब बंगाल के राज्यपाल थे तब बंगाल की सीएम ममता बनर्जी धनखड़ पर केंद्र के आदेश थोपने का आरोप लगाती रही हैं तो वहीं, राज्यपाल कहते रहे हैं कि वह जो भी कार्य करते हैं वह संविधान के मुताबिक होता है। चाहे बात विधानसभा का सत्र बुलाने की हो या किसी नए विधायक को शपथ दिलाने की, बंगाल में तकरीबन हर मामले पर सीएम गवर्नर के बीच सियासी विवाद पैदा हो जाता था। चुनाव के बाद राज्य में हुई हिंसा को लेकर भी सीएम और राज्यपाल में टकराव हुआ था। हालांकि, सीवी आनंद बोस का पश्चिम बंगाल का राज्यपाल बनकर आना भी सीएम ममता बनर्जी को रास नहीं आ रहा है। राज्यपाल सीवी आनंद बोस और ममता सरकार में शुरू से जंग लगातार जारी है।

2021 में पंजाब के राज्यपाल बने बनवारी लाल पुरोहित का कार्यकाल काफी विवादित था। पंजाब में उनका कार्यकाल आम आदमी पार्टी सरकार के साथ लगातार टकराव भरा रहा। खासकर पंजाब राजभवन द्वारा विभिन्न विधेयकों को मंजूरी नहीं मिलने के मुद्दे पर। हर बार जब भी राज्यपाल पुरोहित ने चिंता जताई या स्पष्टीकरण मांगा, तो मुख्यमंत्री, कैबिनेट मंत्री और आधिकारिक प्रवक्ता सहित आम आदमी पार्टी ने कड़ा जवाब दिया। उन्होंने अक्सर पुरोहित पर भाजपा से प्रभावित होने और उनकी सरकार के खिलाफ साजिश रचने का आरोप लगाया।

प्रायः यह देखा गया है कि राज्यपाल की नियुक्ति केन्द्र सरकार करती है। केन्द्र चाहता है कि राज्य का शासन उसकी रीतिनीति के अनुसार चले। ऐसे में राज्य में विपक्ष की सरकार होने के कारण अक्सर टकराव रहता ही है। लेकिन सुप्रीम कोर्ट के निर्णय के बाद संभव है इसमें कमी आएगी और आपसी सकारात्मकता की भावना से जनहित के मामले जल्दी निस्तारित होगें।

बलदेव राज भारतीय
स्वतंत्र पत्रकार

नहीं रहे भारत कुमार

एक 'भारत' जिसका जाना

कुछ पाकर खोना है, कुछ खोकर पाना है, जीवन का मतलब तो आना और जाना है। दो पल के जीवन से एक उम्र चुरानी है, जिंदगी और कुछ भी नहीं तेरी मेरी कहानी है। यह सत्य शाश्वत है, अटल है। जिसने इस धरती पर जन्म लिया, उसका यहां से जाना भी उतना ही निश्चित है, जितना सूरज का पूर्व में उगना और पश्चिम में डूबना। इस अनवरत चक्र में कुछ लोग अपने पीछे ऐसी छाप छोड़ जाते हैं, जो समय की धूल से कभी धुंधली नहीं पड़ती। मनोज कुमार, जिन्हें प्यार से 'भारत कुमार' कहा जाता है, ऐसे ही एक शख्सियत थे। उनके जाने की खबर ने न केवल सिनेमा जगत को, बल्कि पूरे देश को एक गहरे शोक में डुबो दिया। लेकिन उनके जाने के बाद जो माहौल बना, वह शोक से कहीं अधिक गर्व और सम्मान का था। रेडियो की तरंगों से लेकर सोशल मीडिया के हर कोने तक, उनकी फिल्मों के गीत गूंजने लगे। एक पल को ऐसा लगा मानो देश में कोई राष्ट्रीय उत्सव मनाया जा रहा हो, मानो हर गीत, हर धुन, हर शब्द उनके प्रति श्रद्धांजलि अर्पित कर रहा हो।

इस संसार में अपनी एक पहचान बनाकर जाने वाले लोग वास्तव में सौभाग्यशाली होते हैं। सिनेमा के रजतपट पर अपनी कला का जादू बिखेरने वाले कलाकार इस मामले में विशेष रूप से भाग्यशाली हैं, क्योंकि उनकी यादें उनकी फिल्मों के माध्यम से हमेशा जीवित रहती हैं। लेकिन मनोज कुमार को केवल एक अभिनेता, एक निर्देशक या एक कलाकार के रूप में याद करना उनके व्यक्तित्व के साथ अन्याय होगा। वे एक विचार थे, एक संदेश थे, एक ऐसी मशाल थे, जिसने अपनी फिल्मों के जरिए देशप्रेम, संस्कृति और सामाजिकता का प्रकाश फैलाया। उनकी हर फिल्म, हर गीत, हर दृश्य में एक गहरी सोच और संवेदना झलकती थी। जहां उस दौर की अन्य फिल्मों में हीरो और हीरोइन पेड़ों के इर्द-गिर्द नाचते-गाते दिखते थे, वहीं मनोज कुमार की फिल्में भारतीय संस्कृति का उत्कृष्ट प्रदर्शन करती थीं और देशभक्ति का ज्वार उत्पन्न करती थीं।

उनकी फिल्मों के गीत केवल मनोरंजन नहीं थे, बल्कि एक संदेशवाहक थे, जो समाज को दिशा दिखाते थे। उनकी फिल्म उपकार का एक गीत इसका जीवंत उदाहरण है। गीत की पंक्तियां-' है ये धरती सभी की, गगन सबका, तेरा मेरा न कहो, ये चमन सबका। तेरा मेरा जो कहे वो है छोटे दिल का, खरे दिल से बदल लो जो है खोटे दिल का'- न केवल एकता का संदेश देती हैं, बल्कि संकीर्णता को त्यागने की प्रेरणा भी देती हैं। यह गीत आज भी उतना ही प्रासंगिक है, जितना उस समय था। शहीद की स्क्रीनिंग के दौरान दिवंगत प्रधानमंत्री श्री लाल बहादुर शास्त्री जी ने उनसे जय जवान जय किसान के नारे के ऊपर फिल्म बनाने को कहा था। उनकी प्रेरणा से उन्होंने उपकार का निर्माण किया। परन्तु फिल्म पूरी होने से पहले ही शास्त्री जी की मृत्यु हो गई थी। फिल्म के अन्य गीतों की बात की जाए तो 'मेरे देश की धरती सोना उगले उगले हीरे मोती' तो जैसे उस समय देशप्रेम गान बन गया था। इसी तरह उनकी फिल्म यादगार के गीत समाज की कुरीतियों पर प्रहार करते थे। 'इकतारा बोले' के माध्यम से जहां उन्होंने सामाजिक बुराइयों की पोल खोली, वहीं एक अन्य गीत में पंडों के चढ़ावे और अंधविश्वास पर करारा व्यंग्य किया। 'भगवान मंदिर में नहीं तो कहां मिलेगा?'- इस सवाल का जवाब देते हुए कहा गया, 'वो खेत में मिलेगा, खलिहान में मिलेगा।' यह सादगी और गहराई मनोज कुमार की फिल्मों की पहचान थी। उनकी फिल्में केवल मनोरंजन का साधन नहीं थीं, बल्कि एक शिक्षक की भूमिका निभाती थीं, जो समाज को उसकी जड़ों से जोड़ती थीं और उसे बेहतर बनाने का प्रयास करती थीं।

पूरब और पश्चिम उनकी एक ऐसी कृति थी, जिसमें भारतीय और पाश्चात्य संस्कृति के बीच के अंतर को बड़ी संजीदगी और सजीवता से दशार्या गया। 'है प्रीत जहां की रीत सदा, मैं गीत वहां के गाता हूं। भारत का रहने वाला हूं भारत की बात सुनाता हूं' सुनकर हर भारतीय का सीना गर्व से चौड़ा हो जाता है। इस फिल्म में 'ओम जय जगदीश हरे' आरती को नए स्वरों में प्रस्तुत किया गया, जो आज भी कानों में मधुरता घोलता है। फिल्म के पात्रों के माध्यम से संस्कारों का अंतर इतने प्रभावी ढंग से दिखाया गया कि दर्शकों के मन में अपनी संस्कृति के प्रति श्रद्धा और गर्व का भाव जागृत हो उठता था। यह फिल्म केवल एक कहानी नहीं थी, बल्कि एक दर्शन थी, जो यह सिखाती थी कि अपनी जड़ों को कभी नहीं भूलना चाहिए।

मनोज कुमार का फिल्म निर्माण के प्रति समर्पण भी कम प्रेरणादायक नहीं था। उनकी फिल्म शहीद के निर्माण के दौरान वे भगत सिंह की मां से मिले, उनके साथी बटुकेश्वर दत्त से बातचीत की। यह उनकी उस प्रतिबद्धता का प्रमाण था, जो वे अपने काम के प्रति रखते थे। वे फिल्में केवल पैसा कमाने का जरिया

नहीं मानते थे, बल्कि उनके लिए यह एक मिशन था, एक संकल्प था। उनकी फिल्म क्रांति इसका सबसे बड़ा उदाहरण है। कहते हैं कि इस फिल्म के लिए जब किसी ने उन्हें आर्थिक सहायता नहीं दी, तो उन्होंने अपना सब कुछ दांव पर लगा दिया। अपना घर, अपनी संपत्ति - सब कुछ गिरवी रख दिया। यह भी सुनने में आता है कि उस समय उनके पास केवल एक साइकिल ही ऐसी बची थी, जो गिरवी नहीं रखी गई थी। इतना सब कुछ दांव पर लगाने के बाद भी उन्होंने अपनी कहानी से कोई समझौता नहीं किया।

क्रांति जैसी मल्टीस्टारर फिल्म को बनाना और उसे सफल बनाना कोई आसान काम नहीं था। उस दौर में राज कपूर की मेरा नाम जोकर जैसी मल्टीस्टारर फिल्म बॉक्स ऑफिस पर असफल रही थी। उस फिल्म को उसके गीतों ने ही कुछ हद तक संभाला था। लेकिन मनोज कुमार ने इस जोखिम को स्वीकार किया। उन्होंने दिलीप कुमार, शत्रुघ्न सिन्हा, शशि कपूर, हेमा मालिनी, परवीन बॉबी, प्रदीप कुमार, धीरज कुमार, प्रेम चोपड़ा जैसे तमाम दिग्गज कलाकारों को एक साथ निर्देशित किया। हर कलाकार को उन्होंने ऐसा किरदार दिया कि किसी को यह शिकायत करने का मौका न मिले कि उसका रोल कम महत्वपूर्ण था। यह उनकी दूरदर्शिता और नेतृत्व क्षमता का परिचय था। क्रांति के गीत–'जिंदगी की न टूटे लड़ी' और 'अब के बरस तुझे धरती की रानी कर देंगे', 'चना जोर गरम बाबू मैं लाया मजेदा-र'- आज भी लोगों के दिलों में बसे हैं।

मनोज कुमार केवल एक फिल्मकार ही नहीं, बल्कि प्रतिभाओं के संरक्षक भी थे। संतोष आनंद जैसे गीतकार उनकी ही देन थे। संतोष आनंद को फिल्मी दुनिया से जोड़कर उन्होंने 'इक प्यार का नगमा है' जैसा अमर गीत हमें दिया। इसी तरह वीरू देवगन को रोटी, कपड़ा और मकान में फाइट मास्टर बनाकर उन्होंने फिल्म इंडस्ट्री में उनके लिए रास्ते खोले। उनकी फिल्मों में हर पहलू-चाहे वह अभिनय हो, निर्देशन हो, गीत हों या एक्शन- सब कुछ एक संपूर्णता लिए हुए था।

उनकी फिल्म रोटी, कपड़ा और मकान ने समाज के निचले तबके की पीड़ा को उजागर किया। इस फिल्म का गीत- 'मैं न भूलूंगा' और 'महंगाई मार गई' - हर उस इंसान की व्यथा को बयां करता है, जो मेहनत के बावजूद जीवन में संघर्ष से जूझता है। यह फिल्म न केवल मनोरंजन थी, बल्कि समाज के सामने एक आईना भी थी।

मनोज कुमार की फिल्मों में देशप्रेम का जज्बा इस कदर भरा था कि दर्शक सिनेमाघर से केवल मनोरंजन लेकर नहीं लौटते थे, बल्कि अपने देश के प्रति गर्व और जिम्मेदारी का भाव लेकर लौटते थे। उनकी फिल्मों के किरदार- चाहे वह उपकार का भारत हो, शहीद का भगत सिंह हो, या क्रांति का क्रांतिकारी-सब अपने आप में एक प्रेरणा थे। वे किरदार केवल स्क्रीन पर नहीं जीते थे, बल्कि दर्शकों के दिलों में भी बस जाते थे।

उनका जीवन और उनका कला के प्रति समर्पण हमें यह सिखाता है कि सच्ची सफलता धन या प्रसिद्धि में नहीं, बल्कि अपने कार्य के प्रति निष्ठा और समाज के प्रति योगदान में निहित है। मनोज कुमार आज हमारे बीच नहीं हैं, लेकिन उनकी फिल्में, उनके गीत और उनका संदेश हमेशा हमारे साथ रहेंगे। वे एक कलाकार से कहीं बढ़कर थे। वे एक युग थे, एक विचार थे, एक प्रेरणा थे। उनका जाना एक युग का अंत हो सकता है। लेकिन उनकी विरासत हमेशा अमर रहेगी।

अंत में क्रांति का वह संवाद जिसमें मां अपने बेटे से पूछती है कि बेटा मैं तुझे पहचानूंगी कैसे? तब क्रांति का भारत कहता है कि जिस बेटे की गर्दन पर फांसी की रस्सी का निशान देखो तो समझ जाना कि वह तुम्हारा भारत है।

(स्वतंत्र पत्रकार एवं इतिहास प्रवक्ता)

राजेश कुमार सिन्हा
वरिष्ठ स्तंभकार, मुंबई

क्या रील्स ने बदल दी है दर्शकों की रुचि

कहते हैं कि मनोरंजन की दुनिया हमेशा से ही बदलाव को सहर्ष स्वीकार कर लेती है तभी तो इस क्षेत्र में बदलाव की हमेशा गुंजाइश रहती है। इतिहास साक्षी है कि समय-समय पर तकनीकी प्रगति और दर्शकों की बदलती रुचि ने कंटेंट के स्वरूप को नया रूप दिया है। टेलीविजन के दौर से होते हुए, ओटीटी प्लेटफॉर्म तक और फिर अब शॉर्ट-फॉर्म वीडियो की लोकप्रियता तक, यह सफर दर्शकों की प्राथमिकताओं के अनुरूप बदला है। आज रील्स, यूट्यूब शॉर्ट्स और अन्य छोटे वीडियो प्रारूपों ने मनोरंजन के क्षेत्र में अपनी एक अलग पहचान बना ली है। डिजिटल युग में इन छोटे वीडियो का आकर्षण बढ़ता जा रहा है, जिससे पारंपरिक कंटेंट की खपत में कमी देखी जा रही है। दरअसल रील्स की अवधारणा सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म्स के विकास के साथ उभरी। छोटे वीडियो, जिन्हें कुछ सेकंड से लेकर एक मिनट तक की अवधि में बनाया जाता है, तेजी से लोकप्रिय हुए हैं। इनके सहज निर्माण और उपभोग की सरलता ने इन्हें एक नए डिजिटल ट्रेंड में बदल दिया। पहले जहां दर्शक लंबे समय तक किसी फिल्म या वेब सीरीज को देखने में रुचि रखते थे, वहीं अब वे कम समय में अधिक से अधिक कंटेंट ग्रहण करना चाहते हैं। इस बदलाव ने केवल मनोरंजन उद्योग को ही नहीं, बल्कि मार्केटिंग, ब्रांडिंग, शिक्षा और जनसंचार के तरीकों को भी प्रभावित किया है। बेशक यह कहने में कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी कि सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म्स ने इस बदलाव को और बढ़ावा दिया। इंस्टाग्राम, फेसबुक, और यूट्यूब जैसे प्लेटफॉर्म्स ने शॉर्ट-फॉर्म वीडियो को प्राथमिकता दी और उन्हें तेजी से वायरल करने के लिए अपने एल्गोरिदम को इसके अनुकूल कर दिय।। इस वजह से, कंटेंट क्रिएटर्स भी इस नए ट्रेंड की ओर आकर्षित हुए और पारंपरिक वीडियो के बजाय छोटे, प्रभावी और आकर्षक वीडियो बनाने लगे। इसका प्रभाव यह हुआ कि दर्शकों की आदतें बदल

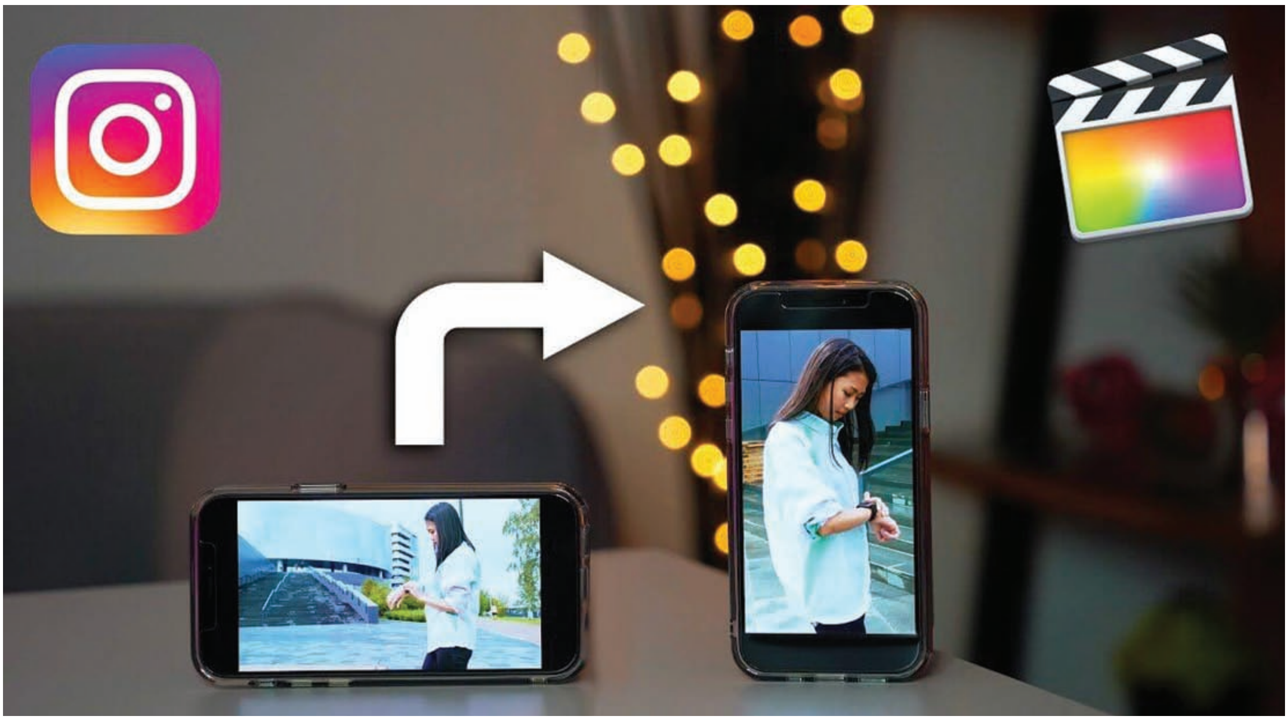

गईं। अब वे कम समय में अधिक से अधिक जानकारी और मनोरंजन प्राप्त करना चाहते हैं।इस बदलाव का सबसे बड़ा असर दर्शकों की ध्यान अवधि पर पड़ा है। पहले जहां लोग एक फिल्म या वेब सीरीज को घंटों तक देखते थे, वहीं अब उनकी सहनशीलता कुछ सेकंड्स तक सीमित हो गई है। इसने मनोरंजन और मीडिया उद्योग को अपनी रणनीतियों में बदलाव करने पर मजबूर कर दिया है। फिल्म निर्माता, वेब सीरीज प्रोड्यूसर और टेलीविजन शो क्रिएटर्स अब छोटे और प्रभावशाली कंटेंट बनाने की ओर अग्रसर हो रहे हैं। विज्ञापन जगत भी इस परिवर्तन को अपना रहा है और कंपनियां अब पारंपरिक विज्ञापनों की बजाय छोटे, आकर्षक और तीव्र प्रभाव डालने वाले वीडियो पर अधिक ध्यान दे रही हैं।इसके अलावा, रील्स और शॉर्ट वीडियो ने एक नई डिजिटल संस्कृति को जन्म दिया है। अब कंटेंट केवल बड़े स्टूडियो और पेशेवर निर्माताओं तक सीमित नहीं है, बल्कि कोई भी व्यक्ति अपने मोबाइल फोन के माध्यम से रील्स बना सकता है और लाखों लोगों तक पहुँच सकता है। इसने डिजिटल लोकतंत्र को बढ़ावा दिया है, जहाँ हर व्यक्ति के पास अपनी प्रतिभा दिखाने और अपने विचार प्रस्तुत करने का अवसर है। हालांकि, इसने एक नकारात्मक पहलू भी उत्पन्न किया है, जिसमें गहन और विचारशील कंटेंट की उपेक्षा होने लगी है। पर ऐसा लगता है कि रील्स की बढ़ती लोकप्रियता के बावजूद, इसका दीर्घकालिक प्रभाव अभी भी अज्ञात है। क्या यह केवल एक अस्थायी ट्रेंड है या यह भविष्य में मनोरंजन का स्थायी रूप बन जाएगा? इस प्रश्न का उत्तर समय ही देगा।

हालांकि, यह स्पष्ट है कि दर्शकों की रुचि में बदलाव आ चुका है और इसे अनदेखा करना संभव नहीं है। मनोरंजन उद्योग, विज्ञापन कंपनियां और कंटेंट क्रिएटर्स अब इस बदलाव को अपनाने के लिए नए तरीके खोज रहे हैं, ताकि वे अपनी दर्शक संख्या बनाए रख सकें और नए दर्शकों तक पहुंच सकें। इसमें कोई दो राय नहीं कि रील्स ने दर्शकों की रुचि को एक नई दिशा दी है। यह बदलाव डिजिटल क्रांति का हिस्सा है, जिसने संचार और मनोरंजन के स्वरूप को पूरी तरह बदल दिया है। जहां एक ओर इसने कंटेंट क्रिएशन को अधिक लोकतांत्रिक बनाया है, वहीं दूसरी ओर इसने गहन और विचारशील कंटेंट के प्रति दर्शकों की रुचि को कम कर दिया है। यह परिवर्तन सकारात्मक भी है और नकारात्मक भी। अब यह देखना दिलचस्प होगा कि भविष्य में यह ट्रेंड किस दिशा में जाता है और मनोरंजन उद्योग इसमें किस प्रकार तालमेल बिठाता है।

बढ़ती अर्थव्यवस्था का क्या सबको मिल रहा है फायदा?

प्रो. महेश चंद गुप्ता
लेखक एवं स्तंभकार

भारत की अर्थव्यवस्था में आय की असमानता एक गंभीर विषय बन गई है। इससे समाज और राष्ट्र का आर्थिक विकास प्रभावित हो रहा है। संतुलित अर्थव्यवस्था के लिए आय का समान वितरण आवश्यक है। असमान आय से क्रय शक्ति प्रभावित होती है और आर्थिक असंतुलन बढ़ता है। अमीरी और गरीबी के बीच खाई बढ़ रही है। सम्पत्ति चंद हाथों में सिमटती जा रही है। इसका परिणाम आम आदमी की बिगड़ती हालत के रूप में सामने आ रहा है।

यह खुशी की बात है कि देश की अर्थव्यवस्था तेजी से आगे बढ़ रही है और यह विश्व की शीर्ष पांच अर्थव्यवस्थाओं में शामिल है लेकिन प्रति व्यक्ति आय के मामले में देश अभी भी पीछे है। विश्व बैंक के अनुसार भारत प्रति व्यक्ति आय के आधार पर 140वें स्थान पर है। बढ़ती जनसंख्या और आय असमानता इसके प्रमुख कारण हैं। भारत की जनसंख्या 140 करोड़ पार कर चुकी है जो वैश्विक आबादी का 18 प्रतिशत है।

वर्ल्ड इनइक्वलिटी डेटाबेस के अनुसार भारत में संपत्ति असमानता बढ़ी है। 1961 में 10 प्रतिशत अमीर लोगों के पास कुल संपत्ति का 44.9 प्रतिशत था, जो 2023 में बढकर 64.6 प्रतिशत हो गया। इसी प्रकार टॉप 0.1 प्रतिशत के पास 1961 में 3.2 प्रतिशत संपत्ति थी, जो 2023 में बढकर 29 प्रतिशत हो गई। भारत की गिनती विश्व के सबसे ज्यादा धन असमानता वाले देशों में से होती है। कुल राष्ट्रीय संपत्ति का 77 प्रतिशत भाग टॉप 10 प्रतिशत लोगों के पास है, जबकि 1 प्रतिशत सबसे अमीरों के पास 53 प्रतिशत संपत्ति है। इसके विपरीत देश के आधे गरीब लोग राष्ट्रीय संपत्ति के मात्र 4.1 प्रतिशत के लिये संघर्ष कर

रहे हैं।

आय असमानता के मामले में भी भारत शीर्ष देशों में है। विश्व असमानता रिपोर्ट 2022 के अनुसार, टॉप 10 प्रतिशत लोगों के पास कुल राष्ट्रीय आय का 57 प्रतिशत और टॉप 1 प्रतिशत के पास 22 प्रतिशत हिस्सा है, जबकि निचले 50 प्रतिशत लोगों की हिस्सेदारी मात्र 13 प्रतिशत रह गई है। आंकड़ों पर नजर डालें तो देश के गरीब लोगों पर टैक्स का बोझ सबसे ज्यादा है। कर प्रणाली में असमानता स्पष्ट है। भारत में निचले 50 प्रतिशत लोग कुल जीएसटी का 64 प्रतिशत भुगतान करते हैं, जबकि टॉप 10 प्रतिशत का योगदान मात्र 4 प्रतिशत है।

जाहिर है, आय असमानता के गंभीर प्रभाव पड़ते हैं। कम आय वाले लोगों की क्रय शक्ति सीमित होने से बाजार में मांग घटती है, जिससे आर्थिक असंतुलन बढ़ता है। उच्च आय वर्ग विलासिता की वस्तुओं पर अधिक खर्च करता है जबकि निम्न आय वर्ग आवश्यक वस्तुओं तक सीमित रहता है। जब कम आय वाले वर्ग के लोगों के पास पर्याप्त क्रय शक्ति नहीं होती तो उत्पादकों और सेवा प्रदाताओं की बिक्री घट जाती है, जिससे अर्थव्यवस्था की स्थिरता प्रभावित होती है। आज हमारे देश के बाजारों में इसी तरह का वातावरण देखने को मिल रहा है।

निम्न आय वाले लोग अपनी आय का अधिकांश हिस्सा अनाज, दालें, सब्जियां और अन्य खाद्य सामग्री जैसी दैनिक उपभोग की वस्तुओं, आवास के किराए या मरम्मत और बुनियादी स्वास्थ्य सेवाओं और बच्चों की शिक्षा पर खर्च पर खर्च करते हैं। इसके विपरीत मध्यम वर्गीय उपभोक्ता अपनी आवश्यकताओं के साथ-साथ कुछ विलासिता और आराम से जुड़ी स्मार्टफोन, टेलीविजन, रेफ्रिजरेटर, ब्रांडेड कपड़े और फैशन से जुड़ी वस्तुओं वस्तुओं और घूमने-फिरने, सिनेमा, रेस्तरां में भोजन पर भी खर्च करते हैं। इसके विपरीत भारत के सुपर रिच की श्रेणी में शामिल लोग लग्जरी वस्तुओं पर खर्च कर रहे हैं। रियल एस्टेट कंसल्टेंट नाइट फ्रैंक की ओर से जारी द वेल्थ रिपोर्ट 2024 के अनुसार भारतीय अल्ट्रा-रिच अपनी निवेश योग्य संपत्ति का 17 प्रतिशत लग्जरी वस्तुओं में लगाते हैं, जिसमें घडियो़ं को सबसे अधिक प्राथमिकता दी जाती है, उसके बाद आर्ट और आभूषण आते हैं। चौथे स्थान पर सुपर रिच लोग क्लासिक कारें खरीदते हैं। इसके बाद लग्जरी हैंडबैग, वाइन, दुर्लभ व्हिस्की, फर्नीचर, रंगीन हीरे और सिक्कों की खरीद हैं। हालांकि, वैश्विक स्तर पर, सुपर-रिच लग्जरी घडियो़ं और क्लासिक कारों के लिए अपनी प्राथमिकता दिखाते हैं। रिपोर्ट के अनुसार भारत में विभिन्न आयु समूहों में दुर्लभ संग्रहणीय वस्तुओं की मांग बढ़ रही है।

शहरों और कस्बों में कम आय के कारण लोगों को अच्छी स्वास्थ्य सुविधाएं, शिक्षा और आवास प्राप्त करने में कठिनाई हो रही है। कम आय वाले लोगों को मूलभूत आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए संघर्ष करना पड़ रहा है। आय असमानता की वजह से गरीब लोग अवसरों से वंचित हो जाते हैं। वह उच्च शिक्षा और तकनीकी कौशल की कमी के कारण लोग अच्छी नौकरियों और उच्च वेतन वाले क्षेत्रों में प्रवेश नहीं कर पाते। बड़े उद्योगों और वैश्विक बाजारों में प्रतिस्पर्धा के कारण छोटे व्यापारियों और कम वेतन पाने वाले श्रमिकों पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। सामाजिक और आर्थिक ढांचे में भिन्नता के कारण कुछ वर्गों को अधिक अवसर मिलते हैं जबकि अन्य वर्ग पीछे रह जाते हैं। आय असमानता से गरीबी बढने और इससे सामाजिक तनाव उत्पन्न होने का अंदेशा रहता है। गरीबी बढ़ रही है, तभी तो सरकार को 81 करोड़ लोगों को मुफ्त अनाज देना पड़ रहा है।

वैसे सरकार ने बीते साल दावा किया कि देश में 95 फीसदी गरीबी कम हो गई है। केवल 5 प्रतिशत लोग ही अब गरीबी की रेखा से नीचे रह गए हैं। नीति आयोग के सीईओ बीवीआर सुब्रह्मण्यम ने नेशनल सैंपल सर्वे ऑफिस के एनालिसिस के आधार पर यह दावा किया था। यह सर्वे अगस्त 2022 से जुलाई 2023 के दौरान 2,61,746 परिवारों के बीच किया गया। बड़ा सवाल यह है कि अगर 95 प्रतिशत लोग गरीबी रेखा से बाहर आ चुके हैं तो वह 81 करोड़ लोग कौन हैं जो सरकार से फ्री में अनाज प्राप्त कर रहे हैं? आखिर किन लोगों के लिए केंद्र सरकार प्रधानमंत्री गरीब कल्याण योजना के तहत 11 लाख 80 हजार करोड़ रुपये की लागत वाली योजना को आगामी पांच साल के लिए बीते वर्ष जनवरी में ही आगे बढ़ा चुकी है?

पिछले साल जारी विश्व बैंक की एक रिपोर्ट के अनुसार करीब 12.9 करोड़ भारतीय गरीबी का सामना कर रहे हैं। ऐसे लोगों की प्रतिदिन आय 181 रुपये (2.15 डॉलर) से भी कम है।

सरकार गरीबों को अनाज उपलब्ध करवा रही है। विभिन्न योजनाएं गरीबों का आर्थिक स्तर ऊंचा उठाने के लिए संचालित की जा रही हैं, यह सराहनीय है। प्रत्येक कल्याणकारी सरकार का यह दायित्व है मगर हालात तभी बदलेंगे, जब आय में असमानता खत्म होगी। अभी भारत प्रति व्यक्ति आय के आधार पर 140वें स्थान पर है, इसे जब तक टॉप 10 में नहीं लाएंगे, तब तक हालात बदलने की उम्मीद बेमानी है। आय असमानता दूर करने के लिए सरकार को उच्च गुणवत्ता वाली शिक्षा और व्यावसायिक प्रशिक्षण को बढ़ावा देना चाहिए ताकि लोग अधिक योग्य बन सकें। उचित कर प्रणाली भी समय की पुकार है। संतुलित कर प्रणाली अपनाकर उच्च आय वर्ग से अधिक कर लेकर निम्न आय वर्ग को राहत दी जा सकती है। न्यूनतम वेतन में वृद्धि और श्रमिक अधिकारों की सुरक्षा से भी असमानता कम करना संभव है। सार्वजनिक वितरण प्रणाली का विस्तार कर गरीबों को आवश्यक वस्तुएं सस्ती दरों पर उपलब्ध कराकर उनकी क्रय शक्ति को मजबूत करना संभव है। हम शिक्षा, टेक्नोलॉजी, इंफ्रास्ट्रक्चर और रोजगार पर ध्यान देकर प्रति व्यक्ति आय को बढ़ा सकते हैं।

आय असमानता केवल आर्थिक नहीं, बल्कि सामाजिक समस्या भी है। यदि सरकार और नीति निमार्ता इस दिशा में ठोस कदम उठाएं तो क्रय शक्ति मजबूत होगी और संतुलित एवं समावेशी अर्थव्यवस्था का निर्माण संभव होगा। भारत अब दुनिया की सबसे बड़ी आबादी वाला देश बन चुका है, ऐसे में गरीब तबके को आर्थिक विकास की मुख्यधारा में लाने के लिए नई नीतियां आवश्यक हैं। अन्यथा, भविष्य में देश के समक्ष चुनौतियां और गंभीर होती जाएंगी।

(लेखक प्रख्यात शिक्षा विद् एवं दिल्ली यूनिवर्सिटी फाउंडेशन के कोऑर्डिनेटर हैं।)

अब गर्मी की मार

विजय गर्ग

अमरस, शरबत, ठंडाई, आइसक्रीम, कुल्फी, सोडा, शिकंजी के दिन आ गये हैं। हमारी जिंदगी में सावन या वसंत आये न आये पर गर्मी तो सही समय पर आकर खड़ी हो जाती है। खड़ी क्या होती है, यूं समझो कि एक बेवफा प्रेमिका की तरह सताती है। फिर बिजली जाने और पानी की किल्लत का सिलसिला चालू हो जाता है। पानी बचाओ, तरल पदार्थ पियो और पक्षियों के लिए पानी रखो जैसे प्रवचनों की बाढ़-सी आ जाती है।

इधर बड़ी मुश्किल से कंबल-रजाई तह करने से जान छूटती है। पर सर्दियों के कपड़े समेट कर रखना भी अपने आप में पूरा प्रोजेक्ट है। पूरी तो जगह चाहिए और पूरा समय। गर्मी के मौसम की अलग आफत है। अब बोतल और कूलर में पानी भरने में जुटो और एसी की सर्विस करवाओ। इस बार समय से पहले ही खूंखार गर्मी पड़नी प्रारंभ हो गई है। गर्मी अकेली नहीं आती, अपने साथ धूल भरी आंधियां जरूर लाती है। फिर झाड़ू उठाए घूमते रहो सारा दिन और घरवालों के ताने सुनो कि घर में सफाई ही नहीं है।

वैसे देखा जाये तो सूरज का जलना भी वाजिब है क्योंकि हर कोई चांद को प्रेम करता है। भला सूरज को यह प्रेम कैसे सुहाएगा? जलन तो होगी ही। एक मनचले का कहना है कि काश! सूरज की भी कोई पत्नी होती तो उसे कंट्रोल में रखती। एक शराबी का सुझाव है कि गर्मियों में दारू दोपहर को पीनी चाहिए, क्योंकि गिर भी गये तो कह सकते हैं गर्मी के कारण चक्कर आ गया होगा। तपती दोपहर में स्कूटर या कार की बलबलाती सीट पर बैठना भी बहादुरी का कारनामा माना जा सकता है। इन दिनों बैंगन बेचने वाले पता नहीं क्या करते होंगे क्योंकि शाम तक तो टोकरे में रखे-रखे बैंगनों का भरता ही बन जाता होगा।

एक नई बात देखने में आई है कि अब लोगों को लू कहने में भी शर्म आने लग गई है। अपनी लू अब हीट वेव बन चुकी है। मौसम विभाग कभी येलो अलर्ट भेजता है कभी ऑरेंज अलर्ट। गर्मी का यही हाल रहा तो शायद वह दिन भी आयेगा जब यह घोषणा होगी कि ढाबे वालों को तन्दूर की जरूरत नहीं रहेगी। अब कार के बोनट पर भी रोटियां सेंकी जा सकती हैं।

बढ़ती गर्मी से संकट में जीवन

ललित गर्ग

भारत में इस समय गर्मी एवं हीट वेव का प्रकोप बढ़ता जा रहा है, खासकर उत्तर भारत के अनेक राज्यों विशेषतः गुजरात, राजस्थान, दिल्ली, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र और ओडिशा में अप्रैल के प्रारंभ में ही बढ़ती गर्मी एवं हीट वेव लोगों को अपनी चपेट में लेने लगी, कई शहरों में पारा 44-45 डिग्री तक चढ़ गया है। राजस्थान के बाडमेर में तापमान 46 डिग्री सेल्सियस के पार पहुंच गया है, जो चिन्ताजनक होने के साथ अनेक समस्याओं एवं परेशानियों का सबब है। लगातार बढ़ती गर्मी के आंकड़े एक बार फिर जलवायु परिवर्तन के परिणामों और इसकी वजह से खड़े हुए संकट को ही दर्शा रहे हैं। अधिक तापमान पानी की गंभीर कमी का कारण बन सकता है, कृषि को प्रभावित कर सकता है और विशेष रूप से घनी आबादी वाले क्षेत्रों में महत्वपूर्ण स्वास्थ्य जोखिम का कारण बन सकता है। भीषण गर्मी एवं लू का प्रकोप लोगों की सेहत, कार्य-क्षमता और उत्पादकता पर गंभीर खतरा है। विश्व बैंक के एक अध्ययन के मुताबिक, देश का करीब 75 फीसदी कार्यबल कृषि और निर्माण क्षेत्र में गर्मी का सीधे सामना करने वाले श्रम पर निर्भर करता है। इसके मुताबिक साल 2030 तक गर्मी के प्रकोप से जुड़ी उत्पादकता में गिरावट की वजह से दुनिया भर में कुल होने वाली नौकरियों के नुकसान में अकेले भारत का योगदान करीब 43 फीसदी तक हो सकता है।

इस बार बढ़ती गर्मी के पुराने सारे रेकॉर्ड तोड़ देने की चेतावनी दी जा रही हैं जो हमारे लिए चौंकाने से ज्यादा गंभीर चिंता की बात है। गुजरात एवं राजस्थान के अनेक स्थानों पर अभी से गर्मी इतनी तेज है कि कुछ ही दिनों में धरती तवे की तरह तपने लगेगी। पानी की कमी, बिजली कटौती और गर्म लू के कारण बीमारी के हालात गंभीर हो सकते हैं। इतनी तेज गर्मी में पेयजल की उपलब्धता, बिजली की आपूर्ति व ट्रिपिंग की समस्या से निजात पाना मुश्किल होगा। सवाल यह है कि इस भीषण लू या यों कहें कि हीटवेव के लिए बहुत कुछ हम, हमारी सुविधावादी जीवनशैली और हमारा विकास का नजरिया भी जिम्मेदार है। आज शहरीकरण और विकास के नाम पर प्रकृति को विकृत करने में हमने कोई कमी नहीं छोड़ी है। पेड़ों की खासतौर से छायादार पेड़ों की अंधाधुंध कटाई एवं गांवों में हो या शहरों में आंख मींचकर कंक्रिट के जंगल खड़े करने की होड़ के दुष्परिणाम से ही गर्मी कहर बरपाती है और प्रकृति एवं पर्यावरण की विकरालता के रूप में सामने आती हैं। जल संग्रहण के परंपरागत स्रोतों को नष्ट करने में भी हमने कोई गुरेज नहीं किया। अब विकास एवं सुविधाओं और प्रकृति के बीच सामंजस्य की और ध्यान देना होगा, अन्यथा आने वाले साल और अधिक चुनौती भरे होंगे। कंक्रिट के जंगलों से लेकर हमारे दैनिक उपयोग के अधिकांश साधन एवं विकास की भ्रामक सोच तापमान को बढ़ाने वाले ही हैं।

विडंबना यह है कि ग्लोबल वार्मिंग की दस्तक देने के बावजूद विकसित व संपन्न देश पर्यावरण संतुलन के प्रयास करने तथा आर्थिक सहयोग देने से बच रहे हैं। ऐसा नहीं है कि मौसम की मार से कोई विकसित व संपन्न देश बचा हो, लेकिन प्राकृतिक संसाधनों के क्रूर दोहन से औद्योगिक लक्ष्य पूरे करने वाले ये देश अब विकासशील देशों को नसीहत दे रहे हैं। निश्चित रूप से बढ़ता तापमान उन लोगों के लिये बेहद कष्टकारी है, जो पहले ही जीवनशैली से जुड़े रोगों एवं समस्याओं से जूझ रहे हैं। जिनकी रोग प्रतिरोधक क्षमता असाध्य रोगों की वजह से चूक रही है। ऐसा ही संकट वृद्धों के लिए भी है, जो बेहतर चिकित्सा सुविधाओं व सामाजिक सुरक्षा के अभाव में जीवनयापन कर रहे हैं। वैसे एक तथ्य यह भी है कि मौसम के चरम पर आने, यानी अब चाहे बाढ़ हो, शीत लहर हो या फिर लू हो, मरने वालों में अधिकांश गरीब व कामगार तबके के लोग ही होते हैं। जिनका जीवन गर्मी में बाहर निकले बिना या काम किये बिना चल नहीं सकता। निष्कर्षतः कह सकते हैं कि उन्हें मौसम और गरीबी दोनों मारती है।

प्रतिवर्ष धरती का तापमान बढ़ रहा है। आबादी बढ़ रही है, जमीन छोटी पड़ रही है। हर चीज की उपलब्धता कम हो रही है। आक्सीजन की कमी हो रही है। जलवायु परिवर्तन की वजह से हो रहा तापमान में लगातार असंतुलन सामान्य घटना नहीं है, जिसका दायरा अब वैश्विक हो गया है। भले ही कोई इस विनाशकारी स्थिति को तात्कालिक घटना कहकर खारिज कर दे लेकिन जमीनी सच्चाई यह है की बड़े पैमाने पर ग्लेशियर्स का पिघलना और हीट वेव बहुत बड़े वैश्विक खतरें की आहट है, जिसको अनदेखा नहीं किया जा सकता है। कथित विकास की बेहोशी से दुनियां को जागना पड़ेगा। ग्लोबल वार्मिंग की वजह से 'तीसरा ध्रुव' कहे जानें वाले हिमालय के ग्लेशियर 10 गुना तेजी से पिघल रहे हैं। ब्रिटेन की लीड्स यूनिवर्सिटी के शोधकताओं के अनुसार, आज हिमालय से बर्फ के पिघलने की गति ह्यलिटल आइस एजह्न के वक्त से औसतन 10 गुना ज्यादा है। लिटल आइस एज का काल 16वीं से 19वीं सदी के बीच का था। इस दौरान बड़े पहाड़ी ग्लेशियर का विस्तार हुआ था। वैज्ञानिकों की मानें, तो हिमालय के ग्लेशियर दूसरे ग्लेशियर के मुकाबले ज्यादा तेजी से पिघल रहे हैं। विशेषज्ञों के एक अनुमान के अनुसार अंटार्कटिका के ग्लेशियर के पूरी तरह से पिघलने पर पृथ्वी की ग्रेविटेशनल पावर शिफ्ट हो जाएगी। इससे पूरी

दुनिया में भारी उथल पुथल देखने को मिलेगी। पृथ्वी के सभी महाद्वीप आंशिक रूप से पानी के भीतर समा जाएंगे। भारी मात्रा में जैव-विविधता को हानि पहुंचेगी। पृथ्वी पर रहने वाली हजारों प्रजातियां भी खत्म हो जाएंगी। पृथ्वी पर एक विनाशकारी एवं विकराल स्थिति का उद्भव होगा। इसके साथ ही दुनियां भर में करोड़ों की संख्या में लोगों को एक जगह से दूसरी जगह पर माइग्रेट करना पड़ेगा।

दुनियाभर में कूलिंग सिस्टम्स यानी एयरकंडीशन की मांग कई गुना बढ़ी है। सुविधावादी जीवनशैली एवं तथाकथित आधुनिकता ने पर्यावरण के असंतुलन को बेतहाशा बढ़ाया है। तापमान में भी साल-दर-साल बढ़ोतरी अनेक संकटों की दस्तक है। जहां तापमान ने नए रिकॉर्ड्स बनाने शुरू कर दिए हैं वहीं, भारी बारिश के कारण बाढ़ के हालात बन रहे हैं। ग्लोबल वार्मिंग के कारण मौसम को लेकर अनिश्चितता बढ़ती जा रही है। सरकारों को नीतिगत फैसला लेकर बदलते मौसम की चुनौतियों को गंभीरता से लेना होगा। समय रहते बचाव के लिये नीतिगत फैसले नहीं लिए गए तो एक बड़ी आबादी के जीवन पर संकट मंडराएगा। यह संकट तीखी गर्मी से होने वाली बीमारियों व लू से होने वाली मौतें ही नहीं होंगी, बल्कि हमारी कृषि एवं खाद्य सुरक्षा श्रृंखला भी प्रभावित होगी। हालिया अध्ययन बता रहे हैं कि मौसमी तीव्रता से फसलों की उत्पादकता में भी कमी आई है। दरअसल, मौसम की यह तल्खी केवल भारत ही नहीं ,वैश्विक स्तर पर नजर आ रही है।

सरकारों को मानना होगा कि वैसे तो प्रकृति किसी तरह का भेदभाव नहीं करती मगर सामाजिक असमानता के चलते वंचित समाज इसकी बड़ी कीमत चुकाता है। सरकार रेड अलर्ट व ऑरेंज अलर्ट की सूचना देकर अपने दायित्वों से पल्ला नहीं झाड़ सकती। बढ़ती गर्मी को देखते हुए स्कूल-कालेजों के संचालन, दोपहर की तीखी गर्मी के बीच कामगारों व बाजार के समय के निर्धारण को लेकर देश में एकरूपता का फैसला लेने की जरूरत है। कुछ जगहों पर धारा 144 लागू करना इस संकट का समाधान कदापि नहीं है। कभी संवेदनशील भारतीय समाज के संपन्न लोग सार्वजनिक स्थलों में प्याऊ की व्यवस्था करते थे। लेकिन आज संकट यह है कि पानी व शीतल पेय के कारोबारी मुनाफे के लिये सार्वजनिक पेयजल आपूर्ति को बाधित करने की फिराक में रहते हैं। सरकारें भी जल के नाम पर राजनीति करती है। हमारे राजनीतिज्ञ, जिन्हें सिर्फ वोट की प्यास है और वे अपनी इस स्वार्थ की प्यास को पानी से बुझाना चाहते हैं। विभिन्न प्रांतों के बीच का यह विवाद आज हमारे लोकतांत्रिक ताने-बाने को छिन्न-भिन्न कर रहा है, जनजीवन से खिलवाड़ कर रहा है। इस तरह की तुच्छ एवं स्वार्थ की राजनीति करने वाले नेता क्या गर्मी एवं जल-समस्याओं का समाधान दे पाएंगे?

दूसरा मत

हार्दिक शुभकामनाएं

पढ़ें और पढ़ाएं दूसरा मत

एक शुभचिंतक, दिल्ली

पुनीत उपाध्याय
स्तंभकार

बच्चों को बंट रहे खाने में न्यूट्रिएंट की कमी

किसी विशेष त्यौहार या अवसर पर रसोई के बर्तन या भोजन के रूप में योगदान दिया जा सकता है। इसके अलावा, इच्छुक सदस्य बच्चों को पहले से दिए जा रहे भोजन के अलावा स्नैक्स, मिठाई, अंकुरित अनाज आदि जैसे पूरक भोजन भी दे सकते हैं। धार्मिक और धर्मार्थ संस्थाओं को भी तिथि भोजन योजना में भाग लेने के लिए प्रोत्साहित किया जा रहा है ताकि बच्चों को बेहतर भोजन मिल सके।

यूनेस्को ने विद्यार्थियों को परोसे जाने वाले भोजन यानि मिड-डे-मील में न्यूट्रिएंट की कमी पर चिंता जताते हुए स्वस्थ और अधिक पौष्टिक खाद्य पदार्थों के उपयोग और स्कूली पाठ्यक्रम में खाद्य शिक्षा को शामिल करने की वकालत की है। यूनेस्को की रिपोर्ट बच्चों के स्वास्थ्य और सीखने में स्कूली भोजन के महत्व को रेखांकित करती है। 27 और 28 मार्च को फ्रांस द्वारा आयोजित 'पोषण के लिए विकास' सेमिनार के अवसर पर यूनेस्को ने परोसे जाने वाले भोजन की गुणवत्ता पर ध्यान केंद्रित करते हुए एक नई रिपोर्ट प्रकाशित की। रिपोर्ट से पता चलता है कि 2022 में दुनिया भर में लगभग करीब 27 फीसदी स्कूली भोजन पोषण विशेषज्ञों के परामर्श से तैयार नहीं किए गए थे। मूल्यांकन किए गए 187 देशों में से केवल 93 देशों में स्कूल के भोजन और पेय पर कानून, मानक या दिशा-निर्देश थे और इन 93 देशों में से केवल 65 फीसदी में स्कूल कैफेटेरिया, खाद्य दुकानों और वेंडिंग मशीनों में भोजन और पेय की बिक्री को नियंत्रित करने वाले मानक थे।

यूनेस्को महानिदेशक ऑड्रे अजोले के अनुसार हाल के वर्षों में किए गए निवेशों की बदौलत दुनिया के लगभग आधे प्राथमिक विद्यालय के विद्यार्थियों को अब स्कूली भोजन उपलब्ध है लेकिन हमें और आगे जाकर यह देखने की जरूरत है कि उनकी थाली में क्या है। हमें संतुलित भोजन और बच्चों को स्वस्थ रहने के लिए अच्छी खाने की आदतें सिखाने पर ध्यान केंद्रित किया जाना चाहिए। यह स्वास्थ्य और शिक्षा के लिए एक बड़ा मुद्दा है। खाद्य शिक्षा के लिए यूनेस्को के सद्भावना राजदूत डेमियन हम्म के अनुसार स्कूल एक ऐसा स्थान होना चाहिए जहां स्वस्थ आदतें

विकसित की जाएं न कि उन्हें कमतर आंका जाए। स्थानीय रूप से उत्पादित, ताजा स्कूली भोजन खाना, पोषण विशेषज्ञों द्वारा दिया जाना बच्चे की शिक्षा का हिस्सा है।

ताजा और न्यूनतम प्रसंस्कृत भोजन को प्राथमिकता

अपनी रिपोर्ट में यूनेस्को ने स्कूल में पोषण में सुधार के लिए कई सकारात्मक पहलों पर प्रकाश डाला है। ब्राजील ने हाल ही में अल्ट्रा.प्रोसेस्ड उत्पादों पर प्रतिबंध लगाए हैं। चीन में ग्रामीण स्कूलों में सब्जियां, दूध और अंडे शुरू करने वाले सुधारों ने बच्चों के पोषक तत्वों के सेवन में वृद्धि की है और स्कूल में उपस्थिति बढ़ाने में मदद की है। नाइजीरिया में 2014 में शुरू किए गए होम-ग्रोन स्कूल फीडिंग प्रोग्राम ने प्राथमिक स्कूल में नामांकन दर में 20 फीसदी की वृद्धि की है। भारत में महाराष्ट्र राज्य में स्कूल के भोजन में आयरन से भरपूर फोर्टिफाइड ऑर्गेनिक मोती बाजरा की शुरूआत ने किशोरों की ध्यान अवधि और याददाश्त में सुधार किया है। यूनेस्को की मंशा है कि सरकारों और शिक्षा हितधारकों को ताजा, स्थानीय उपज पर आधारित स्कूल भोजन प्रदान करने और शर्करायुक्त और अति प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थों की उपस्थिति को कम करने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। स्कूल पाठ्यक्रम में खाद्य शिक्षा को शामिल किया जाना चाहिए। इस वर्षए यूनेस्को सरकारों और शिक्षा पेशेवरों के लिए इन स्वास्थ्य और पोषण मुद्दों को बेहतर ढंग से एकीकृत करने के उद्देश्य से उपकरणों की एक श्रृंखला विकसित करेगा जिसमें एक व्यावहारिक मैनुअल और एक प्रशिक्षण कार्यक्रम शामिल है।

शिक्षा और पोषण का है सीधा संबंध

रिपोर्ट के अनुसार वैश्विक खाद्य असुरक्षा एक बढ़ता हुआ जोखिम है जो जलवायु परिवर्तनए संघर्ष और आर्थिक अस्थिरता से और भी बढ़ गया है। इस बीच खाद्य उत्पादन प्रथाओंए अस्वास्थ्यकर आहार पैटर्न के विपणन और गतिहीन जीवन शैली के कारण मोटापे की दर में वृद्धि हुई है। खाद्य सुरक्षा बेहतर पोषण शैक्षिक उपलब्धि को बढ़ाता है। पर्याप्त प्रारंभिक बचपन का पोषण विकास, शैक्षिक प्राप्ति और समग्र कल्याण के लिए मौलिक है। पौष्टिक स्कूली भोजन और अनुभवात्मक सीखने के अवसर प्रदान करने वाली शैक्षिक व्यवस्थाएँ व्यक्तियों को ऐसे आहार विकल्पों को अपनाने में मदद करती हैं जो व्यक्तिगत स्वास्थ्य और ग्रहीय स्थिरता दोनों के लिए लाभकारी हों। स्पष्ट अंतरनिर्भरता के बावजूद शिक्षा और पोषण के बीच संबंधों पर अभी भी कम शोध किया गया है।

भारतः मद्रास नगर निगम ने 1925 में ही कर दी थी शुरूआत

भोजन और शिक्षा भारत की गरीब आबादी के बीच चिंता के दो सबसे महत्वपूर्ण क्षेत्र हैं। सीमित साधनों के साथ रहने वाले लोगों के पास खाद्य संसाधनों तक सीमित पहुंच होती है और वे शायद ही कभी औपचारिक शिक्षा में दाखिला लेते हैं। बच्चे जो भारत का भविष्य हैं, निम्न आय वर्ग से संबंधित हैं, उन्हें ये दो बुनियादी जरूरतें नहीं मिलती हैं। इसलिए शिक्षा को

बढ़ावा देने और बच्चों को बुनियादी पोषण प्रदान करने के लिएए भारत सरकार द्वारा मध्याह्न भोजन योजना शुरू की गई थी। इस योजना को आधिकारिक तौर पर प्राथमिक शिक्षा के लिए पोषण सहायता का राष्ट्रीय कार्यक्रम कहा जाता था। सितंबर 2021 में कार्यक्रम का नाम बदलकर पीएम पोषण कर दिया गया। यूं तो मध्याह्न भोजन योजना आधिकारिक तौर पर 15 अगस्तए 1995 को शुरू की गई थी, लेकिन इसका इतिहास स्वतंत्रता पूर्व काल से जुड़ा हुआ है। मद्रास नगर निगम में वर्ष 1925 में वंचित बच्चों के लिए मध्याह्न भोजन कार्यक्रम शुरू किया गया था। 1980 के दशक के मध्य तक मध्याह्न भोजन कार्यक्रम केरल, गुजरात, तमिलनाडु और पांडिचेरी के स्कूलों में एक आम बात बन गई। इन राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों ने बच्चों के लिए भोजन की व्यवस्था करने के लिए अपने स्वयं के संसाधनों का उपयोग किया।

वर्ष 1990-91 तक मध्याह्न भोजन कार्यक्रम अपनी लोकप्रियता और सार्वभौमिक प्रासंगिकता के कारण भारत के 12 राज्यों में लागू किया गया था। अगस्त 1995 में इस योजना को प्राथमिक शिक्षा के लिए पोषण सहायता के राष्ट्रीय कार्यक्रम के नाम से आधिकारिक तौर पर शुरू किया गया। 1995 में यह योजना भारत में केवल 2048 ब्लॉकों में शुरू की गई थी। वर्ष 1997-98 तकए यह योजना देश के सभी भागों में लागू हो गई। शुरू में इस योजना में सरकारी स्कूलों, सरकारी सहायता प्राप्त स्कूलों या स्थानीय स्कूलों में कक्षा 1 से 5 में पढ़ने वाले बच्चे शामिल थे। 2002 मेंए इस योजना को शिक्षा गारंटी योजना

और वैकल्पिक और अभिनव शिक्षा केंद्रों में पढ़ने वाले बच्चों को शामिल करने के लिए विस्तारित किया गया था। अक्टूबर 2007 में लगभग 1.7 करोड़ अतिरिक्त बच्चों को इस योजना के तहत शामिल किया गया।

हमारे यहां समुदाय की भागीदारी बढ़ाने का भी हो रहा प्रयास

तिथि भोजन की अवधारणा एक नई अवधारणा है जिसे प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने शुरू किया है। इस पहल का उद्देश्य मध्याह्न भोजन कार्यक्रम के अंतर्गत समुदाय की भागीदारी को बढ़ाना भी है। हालांकि, योजना के अंतर्गत आने वाले बच्चों की माताओं को प्रोत्साहित करने के बजाए तिथि भोजन का उद्देश्य समुदाय के सदस्यों को मध्याह्न भोजन योजना में भाग लेने और योगदान देने के लिए शामिल करना है। तिथि भोजन की अवधारणा को सबसे पहले गुजरात में लागू किया गया था और उसके बाद इसे सभी भारतीय राज्यों में लोकप्रिय बनाया गया। इस अवधारणा का उद्देश्य समुदाय के सदस्यों को मध्याह्न भोजन कार्यक्रम में स्वेच्छा से योगदान करने के लिए लक्षित करना है। किसी विशेष त्यौहार या अवसर पर रसोई के बर्तन या भोजन के रूप में योगदान दिया जा सकता है। इसके अलावा, इच्छुक सदस्य बच्चों को पहले से दिए जा रहे भोजन के अलावा स्नैक्स, मिठाई, अंकुरित अनाज आदि जैसे पूरक भोजन भी दे सकते हैं। धार्मिक और धर्मार्थ संस्थाओं को भी तिथि भोजन योजना में भाग लेने के लिए प्रोत्साहित किया जा रहा है ताकि बच्चों को बेहतर भोजन मिल सके।

ललित गर्ग
वरिष्ठ पत्रकार एवं स्तंभकार

जजों की संपत्ति कितनी पारदर्शिता की ओर

न्यायपालिका पर जनता का भरोसा लोकतंत्र का अहम आधार है। न्यायिक प्रणाली में किसी संदेह की गुंजाइश नहीं रहे, इसके लिए न्यायपालिका में अधिक पारदर्शिता, जबावदेही एवं निष्पक्षता की जरूरत है। सर्वोच्च न्यायालय से निचली अदालतों तक के न्यायाधीशों को संपत्ति सार्वजनिक करने जैसे कदम उठाए जाने की अपेक्षा आजादी के अमृतकाल में तीव्रता से की जा रही थी, ताकि न्यायपालिका की पारदर्शिता को लेकर उठने वाले संदेह दूर हो सकें, यह मुद्दा जस्टिस यशवंत वर्मा के घर कथित तौर पर जली हुई नोटों की गड्डी मिलने जैसी घटनाओं और उनसे उपजे विवादों के बाद गंभीर सार्वजनिक विमर्श का बन गया था। जनचर्चाओं एवं आदर्श राष्ट्र-निर्माण की अपेक्षाओं को देखते हुए सुप्रीम कोर्ट के न्यायधीशों ने अपनी संपत्ति का ब्योरा सार्वजनिक करने पर जो सहमति जताई है, वह सही दिशा में उठाया गया उचित एवं प्रासंगिक कदम है। इससे न्यायपालिका में पारदर्शिता बढ़ाने में मदद मिलेगी और आम लोगों का उस पर भरोसा मजबूत होगा। देश में न्यायालयों को ऐसी संस्था के रूप में देखा जाता है, जो आम लोगों के लिए न्याय की आखिरी उम्मीद है। न्याय करने वाले न्यायाधीशों पर संदेह के बादल मंडराना न्याय-प्रक्रिया पर भरोसा कम करने का एक बड़ा कारण बनता रहा है। अब जनता की अपने पंच-परमेश्वरों की स्वच्छ-धवल छवि की आकांक्षा पूरी होते हुए दिखाई देना एक रोशनी बना है, जिससे न्याय प्रक्रिया के प्रति विश्वास ज्यादा मजबूत होगा। नया भारत बनाने एवं सशक्त भारत बनाने के लिये न्यायिक प्रक्रिया में सुधार एवं पारदर्शिता सर्वोच्च प्राथमिकता होनी ही चाहिए।

न्यायधीशों को भी अपनी संपत्ति को सार्वजनिक करने का मुद्दा बहुत पुराना रहा है। 1997 में सुप्रीम कोर्ट ने एक प्रस्ताव पारित किया था, जिसके अनुसार हर न्यायाधीश को अपनी प्रॉपर्टी और देनदारियों के बारे में चीफ जस्टिस को बताना होता है। बाद में, एक और प्रस्ताव आया कि न्यायाधीश

चाहें तो अपनी संपत्ति का ब्योरा सार्वजनिक कर सकते हैं, लेकिन यह अनिवार्य नहीं, स्वैच्छिक था। पिछले लगभग तीन दशक में, यह मामला कई बार उठा है। सूचना का अधिकार लागू होने के बाद यह बहस भी हुई कि न्यायपालिका इसके दायरे में क्यों नहीं? इसके पीछे यही तर्क रहा कि किसी निजी जानकारी को तब तक साझा करने की जरूरत नहीं, जब तक उससे सार्वजनिक हित न जुड़े हों। 2010 और 2019 में जब सुप्रीम कोर्ट में यह केस आया था, तब इसी तथ्य को आधार बनाकर कहा गया कि जानकारी सार्वजनिक करना न्यायाधीशों की इच्छा पर है। एक तरह से यह व्यवस्था न्यायाधीशों को लगातार संदेहों के घेरे में रखती रही है। उम्मीद की जानी चाहिए कि सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों द्वारा संपत्ति की सार्वजनिक घोषणा का निर्णय न्यायपालिका में पारदर्शिता कायम करने वाला एक सराहनीय कदम होगा। जजों की संपत्ति सार्वजनिक करने की मांग के पीछे बड़ा तर्क भी यही दिया जाता रहा है कि जब तक जजों की संपत्ति सार्वजनिक नहीं होगी, न्यायपालिका में भ्रष्टाचार के आरोपों पर ठोस कार्रवाई संभव नहीं हो सकेगी। देश में न्याय की प्रक्रिया सहज, सरल पारदर्शी एवं समानतामूलक होने के साथ आम आदमी के भरोसे वाली होनी चाहिए। इसके लिये भारत की सम्पूर्ण न्याय व्यवस्था का भारतीयकरण होना चाहिए। भारतीयकरण के लिये ईमानदारी, निष्पक्षता, पारदर्शिता, जबावदेही आवश्यक मूल्य है।

सरकार की एक संसदीय समिति ने 2023 में सिफारिश की थी कि न्यायाधीशों के लिए संपत्ति की घोषणा अनिवार्य की जाए। हालांकि कतितय कारणों से सरकार इस मामले में आगे नहीं बढ़ी। इसका एक बड़ा कारण सरकार पर यह आरोप लगना भी बना कि सरकार न्यायपालिका में अनावश्यक राजनीतिक दखल दे रही है। लेकिन न्यायपालिका की साख के लिए उसका स्वतंत्र होना और दिखना भी जरूरी है। लेकिन सम्पत्ति की घोषणा के मामले में उन्हें अतिरिक्त सुविधा देना या उनके लिये अतिरिक्त सुविधा का होना, संदेह का कारण बनता रहा है। दरअसल, वर्तमान परिपाटी के अनुसार न्यायाधीशों के लिये निजी संपत्ति का घोषणा पत्र प्रस्तुत करना एक स्वैच्छिक परंपरा है। जिसे अनिवार्य बनाने की मांग की जाती रही है। निश्चय ही न्याय व्यवस्था के संरक्षक होने के कारण इसके स्वैच्छिक रहने पर तमाम किंतु-परंतु हो सकते हैं। यूं तो न्यायपालिका के कामकाज में कई तरह की गड़बड़ियां देखने को मिलती हैं। संपत्ति की घोषणा जैसे कई स्तरों पर न्यायिक सुधार के प्रयास आगे बढ़ाने की जरूरत नये भारत, सशक्त भारत एवं आदर्श भारत के लिये जरूरी है। अब अगर सर्वोच्च अदालत के जज खुद को भी उन कसौटियों पर कसने में नहीं हिचक रहे हैं जिन्हें वे दूसरों के लिए जरूरी मानते हैं, तो निश्चित ही इस कदम से एक सकारात्मक संदेश जरूर गया है।

न्यायिक पारदर्शिता को बढ़ाने के उद्देश्य से, सुप्रीम कोर्ट के सभी 30 मौजूदा न्यायाधीशों ने अपनी संपत्ति को न्यायालय की आधिकारिक वेबसाइट पर प्रकाशित करके सार्वजनिक रूप से प्रकट करने पर सहमति व्यक्त की है। यह घटनाक्रम न्यायपालिका में पारदर्शिता की कमी को लेकर बढ़ती चिंताओं के बाद हुआ है, खासकर दिल्ली उच्च न्यायालय के न्यायाधीश यशवंत वर्मा से जुड़े विवाद के बाद। जिन न्यायाधीशों ने पहले ही अपनी

घोषणाएं प्रस्तुत कर दी हैं, उनमें मुख्य न्यायाधीश संजीव खन्ना, न्यायमूर्ति भूषण रामकृष्ण गवई, न्यायमूर्ति बीवी नागरत्ना, न्यायमूर्ति विक्रम नाथ और न्यायमूर्ति जेके माहेश्वरी शामिल हैं। इसे फैसले को न्याय के प्रति जनता के भरोसे को और मजबूत करने के लिहाज से सही एवं सामयिक कदम के रूप में देखा जा रहा है, जो सुखद होने के साथ-साथ श्रेयस्कर न्याय-प्रक्रिया का द्योतक है। निश्चय ही यह एक सार्थक पहल ही कही जाएगी। इस नवीनतम प्रस्ताव के साथ, सुप्रीम कोर्ट ने सामूहिक रूप से संपत्ति के खुलासे को सार्वजनिक रूप से सुलभ बनाने का निर्णय लेकर जवाबदेही के प्रति अपनी प्रतिबद्धता की पुष्टि की है। भारत के अनेक पड़ोसी देश बांग्लादेश, श्रीलंका, नेपाल आदि में न्यायाधीश अपनी संपत्तियों की घोषणा करते हैं। कई देशों में यह स्वैच्छिक है तो कुछ जगह अनिवार्य भी है।

न्यायपालिका ही फरियाद का अंतिम पड़ाव कहा जाता है। ऐसे में न केवल सुप्रीम कोर्ट के न्यायाधीश बल्कि न्यायपालिका के सभी स्तरों पर न्यायाधीश अपनी संपत्ति को सार्वजनिक करें तो इससे जनता को उनके प्रति विश्वास बढ़ेगा। अब तक का अनुभव बताता है कि उच्च न्यायालयों के स्तर पर भी जजों में संपत्ति को सार्वजनिक करने की प्रवृत्ति काफी कम है। मार्च 2025 तक, उच्च न्यायालयों के कुल 763 में से सिर्फ 49 न्यायाधीशों ने अपनी संपत्ति सार्वजनिक की है। न्यायपालिका में पारदर्शिता बढ़ाने के लिए अभी इस दिशा में और प्रयासों की जरूरत है। निर्वाचित प्रतिनिधियों और नौकरशाहों को अपनी संपत्ति का सार्वजनिक खुलासा करना कानूनन अनिवार्य किया जा चुका है। ऐसे में आम जनमानस में धारणा बनी रहती है कि न्यायपालिका के बाबत भी कोई ऐसी पारदर्शी व्यवस्था होनी चाहिए। यह प्रश्न न्याय व्यवस्था की विश्वसनीयता और जबावदेही से भी जुड़ा है। यहां उल्लेख करना समीचीन होगा कि विधि एवं न्याय विभाग की संसदीय समिति ने वर्ष 2023 में न्यायाधीशों के लिये अनिवार्य रूप से संपत्ति की घोषणा की सिफारिश की थी। लेकिन इस बाबत अभी तक कोई वैधानिक नियम नहीं बनाए गए हैं। लेकिन अब स्वयं न्यायपालिका की तरफ से ऐसी व्यवस्था लागू करने का सराहनीय प्रयास होना सुखद ही कहा जाएगा।

न्यायपालिका हमेशा से समाज में पारदर्शिता, प्रामाणिकता, निष्पक्षता व शुचिता की पक्षधर रही है। जनता इस कसौटी पर अपने न्याय के देवताओं को भी खरा उतरता देखना चाहती है। निस्संदेह इस तरह के फैसले का समाज में पारदर्शी व्यवस्था लागू करने की दृष्टि से दूरगामी प्रभाव भी होगा। इस दिशा में ऐसी किसी भी पारदर्शी व्यवस्था का समाज में स्वागत ही होगा। ऐसे किसी भी कदम से उस आम आदमी के विश्वास को भी बल मिलेगा जो हर तरह के अन्याय व भ्रष्टाचार से तंग आकर उम्मीद की अंतिम किरण के रूप में न्यायालयों का रुख करता है। वह न्यायाधीशों को न्याय, सत्य व सदाचारिता के प्रतीक के रूप में देखता है। वो न्याय देने वालों को न्याय की हर कसौटी पर खरा उतरता हुआ भी देखना चाहता है। यह न्याय की शुचिता की भी अनिवार्य शर्त है। जब एक अकेले व्यक्ति का जीवन भी मूल्यों एवं जीवन-मानकों के बिना नहीं बन सकता, तब एक न्याय-व्यवस्था मूल्यों, निष्पक्ष मानकों, पारदर्शिता एवं समानता के बिना कैसे शक्तिशाली एवं विश्वसनीय बन सकती है?

(लेखक के अपने विचार हैं)

▶▶पूजा गुप्ता
वरिष्ठ लेखिका

'घिबली ट्रेंड और उसकी वैश्विक अपील'

स्टूडियो घिबली, जिसे हयाओ मियाजाकी और इसाओ तकाहता जैसे दिग्गजों ने स्थापित किया, केवल एक एनिमेशन स्टूडियो से कहीं अधिक है। यह एक सांस्कृतिक घटना है जो प्रकृति, मानवता, और कल्पना के बीच के बंधन को उजागर करती है। 'माई नेबर टोटोरो' की मासूमियत से लेकर 'स्पिरिटेड अव' की रहस्यमयी दुनिया तक, घिबली की फिल्में पीढ़ियों को प्रेरित करती रही हैं। लेकिन आज, 'घिबली ट्रेंड' कुछ नया और रोमांचक लेकर आया है। यह एक वैश्विक सांस्कृतिक आंदोलन बन गया है जो फैशन, कला, और जीवनशैली को प्रभावित कर रहा है।

'घिबली ट्रेंड की उत्पत्ति'

घिबली ट्रेंड की शुरूआत तब हुई जब प्रशंसकों और रचनात्मक लोगों ने स्टूडियो की फिल्मों में निहित सौंदर्य और दर्शन को अपनी दैनिक जिंदगी में अपनाना शुरू किया। घिबली की फिल्में प्रकृति के प्रति प्रेम, सरलता, और समुदाय की भावना को बढ़ावा देती हैं। ये सभी तत्व आज की तेज-तर्रार, डिजिटल दुनिया में शांति और संतुलन की तलाश करने वालों के लिए आकर्षक हैं। सोशल मीडिया पर हैशटैग्स के साथ, लोग अपनी अलमारी, घर की सजावट, और यहां तक कि अपने खाने-पीने के तरीके में घिबली की प्रेरणा लेते नजर आते हैं।

'फैशन और डिजाइन में घिबली का प्रभाव'

फैशन डिजाइनरों ने घिबली की पात्रों और परिदृश्यों से प्रेरित कपड़े, एक्सेसरीज, और जूतों की लाइनें लॉन्च की हैं। उदाहरण के लिए, 'किकीज डिलीवरी सर्विस' की युवा और साहसी किकी या 'प्रिंसेस मोनोनोके' की जंगली सुंदरता ने डिजाइनरों को प्रकृति-प्रेरित पैटर्न और बोल्ड स्टाइल बनाने के लिए प्रेरित किया है। घिबली स्टाइल अक्सर पेस्टल रंगों, फ्लोरल प्रिंट्स, और हल्के, प्रवाहमान कपड़ों से पहचाना जाता है, जो शांति और स्वतंत्रता की भावना को व्यक्त करता है।

होम डेकोर में भी घिबली ट्रेंड ने अपनी छाप छोड़ी है। लोग अपने घरों को 'टोटोरो' के जादुई जंगलों या 'हाउल्स मूविंग कैसल' की विचित्र लेकिन गर्मजोशी भरी सेटिंग्स की तरह डिजाइन कर रहे हैं। हैंडमेड क्राफ्ट, विंटेज फर्नीचर, और प्राकृतिक सामग्रियों का उपयोग इस ट्रेंड का हिस्सा बन गया है।

'जीवनशैली और मानसिक शांति'

घिबली ट्रेंड केवल बाहरी सौंदर्य से परे जाता है। यह एक जीवनशैली है जो धीमी गति से जीने, प्रकृति के करीब रहने, और सादगी को अपनाने पर जोर देती है। घिबली की फिल्में हमें सिखाती हैं कि खुशी छोटी-छोटी चीजों में छिपी होती है। एक उड़ते परिंदे में, एक हंसते बच्चे में, या एक शांत झील में। आज की भागदौड़ भरी जिंदगी में, यह संदेश लोगों को अपनी दिनचर्या में बदलाव लाने के लिए प्रेरित कर रहा है। कई लोग अब योग, माइंडफुलनेस, और सस्टेनेबल लिविंग को अपनाने के लिए घिबली की प्रेरणा ले रहे हैं।

'वैश्विक स्तर पर स्वीकृति'

घिबली ट्रेंड ने जापान की सीमाओं को पार कर लिया है और अब यह पश्चिमी देशों में भी लोकप्रिय हो रहा है। सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म्स पर, युवा और वृद्ध दोनों ही घिबली-थीम्ड कॉस्प्ले, फैन आर्ट, और डिय प्रोजेक्ट्स शेयर कर रहे हैं। इसके अलावा, ब्रांड्स और रिटेलर्स भी इस ट्रेंड को भुनाने में लगे हैं, जिससे घिबली की लोकप्रियता और बढ़ रही है।

'भविष्य की ओर'

घिबली ट्रेंड केवल एक अस्थायी फैशन नहीं है; यह एक सांस्कृतिक बदलाव का संकेत है। जैसा कि हम अधिक से अधिक डिजिटल और शहरी जीवन की ओर बढ़ रहे हैं, घिबली हमें प्रकृति और मानवता के मूल्यों की ओर लौटने का निमंत्रण देता है। भविष्य में, हम उम्मीद कर सकते हैं कि यह ट्रेंड और भी गहराई से फैलेगा, नई पीढ़ियों को प्रेरित करेगा और एक सतत, सुंदर दुनिया की कल्पना को जीवंत करेगा।

(लेखिका के अपने विचार हैं)

दीप्ति अंगरीश
महिला संबंधी मामलों की वरिष्ठ लेखिका

लुप्त हो रही हैं कठपुतलियां

कठपुतली केवल एक मनोरंजन का साधन नहीं है, बल्कि यह समाज को शिक्षा, नैतिकता और संस्कारों से जोड़ने का एक प्रभावी माध्यम भी रही है। कठपुतलियां, जो कभी भारतीय लोककला और परंपराओं का अभिन्न हिस्सा थीं, आज धीरे-धीरे हमारी सांस्कृतिक स्मृतियों से लुप्त होती जा रही हैं। भारत में राजस्थान, पश्चिम बंगाल, महाराष्ट्र और दक्षिण भारत में कठपुतली कला की अलग-अलग शैलियां देखने को मिलती हैं। राजस्थान की कठपुतली, बंगाल की पुतुल नाच, महाराष्ट्र की चौड़ा भौंडर और तमिलनाडु की बोम्मलाट्टम इसकी अलग-अलग विधाएं हैं। इनका उपयोग ऐतिहासिक रूप से लोककथाएं, धार्मिक प्रसंग और सामाजिक मुद्दों को व्यक्त करने के लिए किया जाता था।

जिस कठपुतली कला ने कभी राजाओं-महाराजाओं के दरबार में जगह बनाई थी, वही अब विलुप्ति की कगार पर है। आधुनिक मनोरंजन के साधनों झ टेलीविजन, इंटरनेट और सोशल मीडिया ने पारंपरिक कलाओं को पीछे धकेल दिया है। आज के बच्चे कठपुतलियों की जगह कार्टून और वीडियो गेम में ज्यादा रुचि लेते हैं। ऐसे में कठपुतली कलाकारों के लिए जीविका चलाना मुश्किल होता जा रहा है।

राजस्थान के कठपुतली कलाकारों की मानें तो इस कला को जीवित रखना अब चुनौतीपूर्ण हो गया है। परंपरागत रूप से पीढ़ी-दर-पीढ़ी कठपुतली चलाने का काम करने वाले परिवार अब इसे छोड़कर दूसरे रोजगारों की ओर रुख कर रहे हैं। सरकार और समाज की उपेक्षा के कारण यह कला धीरे-धीरे मरती जा रही है।

कठपुतलियों का इतिहास बहुत पुराना है। ईसा पूर्व चौथी शताब्दी में पाणिनी की अष्टाध्यायी के नटसूत्र में पुतला नाटक का उल्लेख मिलता है। कुछ लोग कठपुतली की शुरूआत को लेकर पौराणिक आख्यान का जिक्र करते हैं कि भगवान शिव ने काठ की मूर्ति में प्रवेश कर पार्वती का मन बहला कर इस कला की शुरूआत की थी। सतवर्द्धन काल में भारत से पूर्वी एशिया के देशों इंडोनेशिया, थाईलैंड, म्यांमार, जावा, श्रीलंका आदि में इसका विस्तार हुआ। आज यह कला चीन, रूस, रूमानिया, इंग्लैंड, चेकोस्लोवाकिया, अमेरिका व जापान आदि अनेक देशों में पहुंच चुकी है। इन देशों में इस विधा का सम-सामयिक प्रयोग कर इसे बहुआयामी रूप प्रदान किया गया है। वहां कठपुतली को मनोरंजन के अलावा शिक्षा, विज्ञापन आदि अनेक क्षेत्रों में इस्तेमाल किया जा रहा है।

21 मार्च को विश्व कठपुतली दिवस मनाया जाता है। इसका उद्देश्य कठपुतली को वैश्विक कला के रूप में मान्यता देना है। यह दुनिया भर के कठपुतली कलाकारों के सम्मान का एक प्रयास है। एक समय था जब कठपुतली को सिर्फ मनोरंजन का माध्यम समझा जाता था लेकिन आज कठपुतली कला मनोरंजन के साथ लोगों को जागरुक भी कर रही है। प्राचीनकाल से ही जादू-टोनों एवं कुदरती प्रकोपों से बचने के लिए मानव जीवन में पुतलों का प्रयोग होता रहा है। भारत में ही नहीं बल्कि अन्यत्र भी काष्ठ, मिट्टी व पाषाण से निर्मित ये पुतले जातीय एवं पारिवारिक देवताओं के रूप में प्रतिष्ठित होते रहे हैं।

भारतीय कठपुतलियों की प्राचीनता के संबंध में पौराणिक ग्रन्थों में उल्लेख मिलता है। महाभारत में अर्जुन द्वारा ब्रहन्नला को कठपुतलियों का खेल सिखाने का उल्लेख है। महाभारत में रूपजीवन शब्द का भी काफी प्रयोग हुआ है और वह भी पुतलियों के खेल-तमाशों के संदर्भ में। पंचतंत्र नामक ग्रन्थ में ऐसी कठपुतलियों का जिक्र है। जो लकड़ी की खूटियों के सहारे नाना प्रकार के मानवी करतब दिखलाती थी। विक्रमादित्य के समय सिंहासन बत्तीसी नामक एक ऐसा सिंहासन था जो दिन में सम्राट के बैठने के काम आता था और रात को उसकी बत्तीस कठपुतलियां विभिन्न प्रकार से रागरंग कार्यक्रम कर सम्राट को रिझाती थी। राजस्थान की स्ट्रिंग कठपुतलियां दुनिया भर में मशहूर हैं। इसके अलावा उड़ीसा, कर्नाटक और तमिलनाडु में भी कठपुतलियों की यही कला प्रचलित है।

राजस्थानी कठपुतलियों का ओवल चेहरा, बड़ी आंखें, धनुषाकार भौंहें और बड़े होंठ इन्हें अलग पहचान देते हैं। 5-8 डोरियों से बंधी ये कठपुतलियां राजस्थानी संगीत के साथ नाटक पेश करती हैं। राजस्थान में कठपुतलियों का प्रचलन काफी समय से हो रहा है। यहां कठपुतलियां नटों तथा भाटों द्वारा प्रयुक्त होती है। ये नट नाटक भी करते थे, नाचते भी थे एवं विभिन्न प्रकार के शारीरिक करतब भी दिखलाते थे। यह रस्सियों पर भी चलते थे ओर कठपुतलियां भी नचाते थे। नट जाति में प्रचलित एक किवदंती के आधार पर ब्रह्मा के वरदान से एक आदि नट की उत्पत्ति हुई थी। इन नटों के पूर्वज ही विक्रमादित्य के समय में सिंहासन बत्तीसी नामक कठपुतली नाटक के सर्जक थे। भारत की पुरातन संस्कृति का केन्द्रस्थल उत्तर भारत का राजस्थान एवं सिंध क्षेत्र रह चुका है।

राजस्थान में कठपुलियों का खेल दिखाने का

मंच बहुत सादा होता है। गांव में कठपुतली का खेल दिखाने के लिए दो खाट खड़ी कर उसको ऊपर-नीचे से बांसों से जकड़ कर मंच की शक्ल दे दी जाती है। आगे की तरफ बारादरीनुमा ताजमहल नामक पर्दा लगा दिया जाता है। पृष्ठ भूमि में एक रंगीन काली चादर लगा दी जाती है जिसके पीछे से ये कठपुतलियों का संचालन करते हैं। इनकी कठपुतलियों का आकार लगभग डेढ़ फीट का होता है। इन कठपुतलियों की वेशभूषा पारम्परिक राजस्थानी होती है।

राजस्थान के नट जो पहले राजा-महाराजाओं के दरबारों की शोभा बढ़ाते थे, धीरे-धीरे सामाजिक एवं आर्थिक कारण से पिछड़ते चले गये। जिन राजाओं तथा विशिष्टजनों ने उन्हें प्रोत्साहन एवं संरक्षण प्रदान किया उन्हीं की जीवन-गाथायें इनकी पुतलियों का विषय बन गयी। जैसे विक्रमादित्य के काल की सिंहासन बतीसी, पृथ्वीराज चौहान के समय की पृथ्वीराज संयोगिता व अमरसिंह राठौड़ का खेल प्रमुख था। घोर परम्परा एवं जातीय बन्धनों में बंधे हुये ये भाट आज भी अपनी पुतलियों में संशोधन आदि का सुझाव नहीं मानते हैं। राजस्थान में आज इस जाति के लगभग सोलह हजार भाट मौजूद हैं। जिनमें से आठ हजार आज भी कठपुतलियां नचाने का काम करते हैं। कुछ खेती-बाड़ी के धंधे में भी लगे हुये हैं तो कुछ ने नाच गाने को अपना पेशा बना लिया है। कुछ अपने यजमानों के घर व शादी विवाह के अवसर पर ढोल बजाकर याचक का काम करते हैं।

तीन सौ वर्षों से निरन्तर प्रचलन में होने से राजस्थानी कठपुतलियों का मूल नाटक बिल्कुल ही विकृत हो गया है। अब तो दर्शक संचालन शैली तथा नाट्य-विधि के कारण ही कठपुतली का खेल देखते हैं। आज भी राजस्थानी कठपुतलियों में दर्शकों को बांधने की ताकत देखने का मिलती है जो कदाचित अन्य किसी में नहीं है। कठपुतली संचालक अपने मुंह से ही सीटीनुमा आवाज निकालकर भाव व्यक्त करते हैं। आजकल कठपुतली निर्माण कार्य कठपुतली संचालक स्वयं ही करता है क्योंकि पारम्परिक कठपुतली निर्माता बढ़ई बहुत कम संख्या में रह गये हैं। इन कठपुतलियों को भाट बड़े आदर-भाव से देखते हैं। आज भी इनकी पारम्परिक कठपुतलियों के लंहगों की अनेक परतें इनकी पुरातन प्रियता की द्योतक है। कठपुतलियों के मुंह निर्मित होते हैं तथा अन्य सब अंग रूई व कपड़ों से बनाये जाते हैं। प्रयोग में नहीं आने वाली कठपुतलियों को ये लोग फेंकते नहीं बल्कि आदर पूर्वक जल में प्रवाहित करते हैं।

राजस्थानी कठपुतलियों में चेहरे का आकार शरीर से बड़ा, आंखें काफी बड़ी, वक्षस्थल अत्यन्त लघु एवं उभरा हुआ तथा पांवों का न होना इनकी अपनी विशेषता है। इससे कठपुतलियों का संचालन अत्यन्त सजीव बन जाता है। कठपुतलियों के खेल दिखाने वाले दल में दो या तीन व्यक्ति होते हैं। औरतें ढोलक बजाती हैं व मर्द कठपुतलियां चलाते हैं। इनके दोनों हाथ मशीन की तरह चलते हैं। सीटी द्वारा उत्पन्न विविध ध्वनियां, वाचन के साथ पैर से पैदा की गई आवाजें तथा ढोलक की विचित्र थापें समस्त नाटक को प्राणवान बना देती हैं।

राजस्थानी कठपुतलियां पिछले सैकड़ों वर्षों से समाज की अवहेलना व उदासीनता की शिकार रही हैं। इन्हें सरकार से किसी प्रकार का कोई संरक्षण प्राप्त नहीं हुआ है। इन कठपुतली परिचालक भाटों को उनका पिछड़ापन, अंधविश्वास तथा इनकी परम्परागतता ने भी इन्हें काफी हानि पहुंचाई है। सरकार को इन सर्वाधिक पुरातन कठपुतली कला को आधुनिक बनाने के लिए नये कथानक, नये विचार तथा नवजीवन प्रदान करने में सहयोग करना चाहिये ताकि हमारे लोक जीवन का अंग बन चुकी कठपुतली कला सदैव हमारे साथ रहकर मनोरंजन करती रहे।

जीविकोपार्जन के लिए कठपुतली कलाकारों को गांव-कस्बों से पलायन करना पड़ रहा है। कलाकारों ने नाच-गाना और ढोल बजाने का काम शुरू कर लिया है। रोजगार की तलाश ने ही कठपुतली कलाकारों की नई पीढ़ी को इससे विमुख किया है। जन उपेक्षा व उचित संरक्षण के अभाव में नई पीढ़ी इस लोक कला से उतनी नहीं जुड़ पा रही है जितनी जरूरत है। उनके परिवार के सदस्य आज भी अन्य किसी व्यवसाय की बजाय कठपुतली बनाना पसंद करते हैं। वह कहते हैं कि कठपुतली से उनके पूर्वजों की यादें जुड़ी हुई हैं।

राजेश बादल
वरिष्ठ लेखक, स्तंभकार, पत्रकार, चिंतक

राजेंद्र माथुर प्रसंग

पत्रकारिता के इकलौते घराने की उपयोगिता

नौ अप्रैल यानी यह तारीख भारत की आजादी के बाद सबसे प्रखर और मूर्धन्य संपादक राजेंद्र माथुर की पुण्यतिथि की भी साक्षी है। राजेंद्र माथुर 1991 में उस समय हमें छोड़कर चले गए,जब इस देश की पत्रकारिता को उनकी सर्वाधिक आवश्यकता थी। लेकिन जैसे जैसे दिन बीत रहे हैं,हम पाते हैं कि राजेंद्र माथुर इस मुल्क के बौद्धिक मंच पर सबसे अधिक याद किए जा रहे हैं। अपने लेखन के जरिए स्वर्गीय माथुर हमें एक ऐसा खजाना दे गए हैं ,जो हर दौर में हमें समृद्ध करता रहेगा। इसीलिए हम उनके अलविदा कहने के 34 बरस बाद भी उनको याद करते हैं। भारत के मिनी मुंबई इंदौर में रहते हुए उन्होंने पत्रकारिता के ऐसे चमकीले अध्याय लिखे,जो आने वाली कई पीढ़ियों के लिए रौशनदान का काम करेंगे। आज इंदौर को पत्रकारिता का इकलौता घराना कहा जाता है। इसके बाद उन्होंने लगभग नौ बरस तक नवभारत टाइम्स का प्रधान संपादक रहते हुए बेजोड़ लेखन और पत्रकारिता की।

यह अच्छी बात है कि माथुर जी की स्मृति में इंदौर प्रेस क्लब ने अपने 63 वें स्थापना दिवस पर तीन दिन तक शानदार और विचारोत्तेजक जलसे का आयोजन किया। पत्रकारिता और संप्रेषण की सारी विधाओं के प्रमुख हस्ताक्षर इस प्रसंग में शामिल हुए। मैं भी इनमें एक था। मुझे गर्व हासिल है कि मैं 1977 में उनके संपर्क में आया। फिर अगले चौदह साल (उनकी आखिरी सांस तक) उनके संपर्क में बीते। इस तीन दिनी पत्रकारिता महोत्सव के आगाज के पहले सत्र का पहला संबोधन मेरा था। और समापन व्याख्यान जाने माने चिंतक, विचारक और लेखक पत्रकार पी साईनाथ का रहा। इस दरम्यान विभिन्न सत्रों में जानकारों ने अपनी राय रखी।

इंदौर प्रेस क्लब का अपना भवन है, और उसमें एक सभागार राजेंद्र माथुर के नाम पर भी है। ऐतिहासिक संदर्भ यह है कि माथुर जी इस क्लब के अध्यक्ष रह चुके थे। इसलिए मैंने इस सभागार के लिए उनकी एक तस्वीर प्रेस क्लब को भेंट की। तस्वीर का महत्व यह है कि नौ अप्रैल, 1991 को ही मैंने इसे फ्रेम में लगवाया था। मुझे लगा कि इंदौर प्रेस क्लब इसका वास्तविक हकदार है। इसके अलावा मैंने अपनी पुस्तकें - सदी का संपादक : राजेंद्र माथुर और शब्दसितारे तथा मिस्टर मीडिया इंदौर प्रेसक्लब को भेंट की। बता दूं कि तीनों किताबों में राजेंद्र माथुर जी को गहराई से याद किया गया है। मिस्टर मीडिया तो एक ऐसी किताब है,जो पत्रकारिता की सभी विधाओं के पतन पर तीखे प्रहार करती है। जब मैं यह पुस्तकें अध्यक्ष अरविन्द तिवारी जी को भेंट कर रहा था, तो मुझे सोलह साल पहले की याद ताजी हो गई। इसी प्रेस क्लब के सभागार में राजेंद्र माथुर पर केंद्रित मेरी फिल्म -

कलम का महानायक का पहला प्रदर्शन हुआ था।

अब बात इस जलसे में मेरे सत्र की। विषय था पत्रकारिता का इंदौर घराना। वरिष्ठ पत्रकार प्रकाश हिन्दुस्तानी इसके सूत्रधार थे। करीब 45 साल पहले नई दुनिया में हम लोग साथ काम कर चुके थे। सत्र में मेरे साथी थे इंदौर की पत्रकारिता के तीन और नक्षत्र-अमर उजाला के समूह संपादक भाई यशवंत व्यास,अमर उजाला डिजिटल के मुखिया भाई जयदीप कर्णिक और माखनलाल चतुर्वेदी पत्रकारिता विश्वविद्यालय के कुलगुरु भाई विजय मनोहर तिवारी। सभी ने अपने दिलचस्प अंदाज में पत्रकारिता के इस इंदौर घराने की गाथा और संस्मरण सुनाए। मैंने अपने संबोधन में सवाल उठाया कि हिंदी का पहला अखबार और अड़तालीस साल पहले रविवार जैसी पत्रिका निकालने वाला कोलकाता पत्रकारिता का घराना नहीं बना, बनारस,कानपुर, लखनऊ, जयपुर और पटना जैसे शहर अच्छे अखबारों के प्रकाशन स्थल तो बने, लेकिन घराने नहीं बन पाए। यहां तक कि नई दिल्ली से नवभारत टाइम्स, जनसत्ता और हिन्दुस्तान जैसे समाचार पत्र निकल रहे हैं, पर दिल्ली का नाम कभी पत्रकारिता के तीर्थ की तरह नहीं लिया जाता। यह संबोधन तो सिर्फ इंदौर को प्राप्त है। यहां से राहुल बारपुते, शरद जोशी, राजेंद्र माथुर,डॉक्टर रणवीर सक्सेना, वसंत पोतदार, प्रभाष जोशी और माणिक चंद वाजपेयी जैसे पत्रकारिता के सितारे चमके और देखते ही देखते भारत में छा गए। इनमें से लगभग सभी का सफर एक दूसरे के साथ जुड़ा हुआ है। लेकिन सबकी पत्रकारिता अपनी विशिष्ट सुगंध के साथ अलग अलग उपस्थित है। ठीक वैसे ही जैसे किसी बगीचे में अलग अलग फूल अपनी अपनी सुगंध के साथ रहते हैं। कोई फूल अपनी गंध दूसरे फूल पर थोपने की कोशिश नहीं करता। इसी तरह राहुल बारपुते राजेंद्र माथुर को लाए,लेकिन अपनी शैली उन पर नहीं थोपी। इसी शहर में संपादकाचार्य बनारसीदास चतुर्वेदी महाविद्यालय में प्रवक्ता बनकर आते हैं। और यहां से सेन्स ऑफ हयूमर के अंदाज अपने भीतर उतारते हैं। ऐसे ऐसे अनेक उदाहरण हैं। यही घराने का संस्कार होता है। इंदौर में इन महानुभावों ने अपनी पत्रकारिता के जरिए जो काम किया, उसका असर आज की पीढ़ियों में भी दिखाई देता है। मैंने अनुरोध किया कि आज इंदौर से आस है कि पत्रकारिता में पतन के दौर को रोकने में सहायता करे। सभी साथी पत्रकारों ने अपने दिलचस्प ढंग से इस घराने का विश्लेषण किया। कुल मिलाकर यह एक वैचारिक रूप से झकझोरने वाला सत्र था। इस शानदार जलसे के लिए प्रेस क्लब अध्यक्ष अरविन्द तिवारी और उनकी टीम के लिए बधाई तो बनती है। चित्र इसी अवसर के हैं।

(लेखक देश के जानेमाने वरिष्ठ पत्रकार हैं)

सुंदर समाज निर्माण के लिए बेटियों को शिक्षित और सक्षम बनाना जरूरी: विकास आयुक्त

सामाजिक संस्था अभिलाषा ज्योति फाउंडेशन के स्थापना दिवस समारोह का उद्घाटन करते हुए बिहार के विकास आयुक्त और भारतीय प्रशासनिक सेवा के वरिष्ठ अधिकारी अमृत प्रत्यय ने, बी आइ ए सभागार में, कल्याणकारी विचार व्यक्त किए। उन्होंने कहा कि सुंदर समाज के निर्माण के लिए बेटियों को शिक्षित और सक्षम बनाना बहुत आवश्यक है। बेटियां जो आगे चलकर बहुएं और माताएं बनेंगी, देश के नव-निर्माण में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण योगदान दे सकती हैं। इससे न केवल महिलाएँ बल्कि भारतीय समाज सशक्त होगा।

समारोह के मुख्य अतिथि और बिहार हिन्दी साहित्य सम्मेलन के अध्यक्ष डा अनिल सुलभ ने कहा कि बेटियों में शिक्षा और संस्कार भरना सर्वाधिक आवश्यक है। यही गुण उन्हें सक्षम बनाएंगे और लोक-कल्याणकारी भी। नारी-सशक्तिकरण का अर्थ पुरुष विरोध नहीं, बल्कि समाज और राष्ट्र के विकास में पुरुषों से बढ़कर योगदान देना है। उन्होंने आगे कहा कि स्त्रियों का हृदय पुरुषों की तुलना में बड़ा होता है। उनमे करुणा और प्रेम अधिक होता है। और यही उदाररता जीवन को मूल्यवान बना देता है।

बिहार विद्यापीठ के अध्यक्ष और भारतीय प्रशासनिक सेवा के अवकाश प्राप्त अधिकारी विजय प्रकाश ने मिथिला की महान विदुषी भारती मण्डन मिश्र और सीमांचल की एक अनपढ़ विधवा कलावती देवी के शिक्षा में अन्यतम योगदान का उदाहरण देते हुए कहा कि महिला-शिक्षा एवं उनके सशक्तिकरण में इनसे प्रेरणा लेणी चाहिए।

संस्था की अध्यक्ष ज्योति श्रीवास्तव की अध्यक्षता में, बालिका सशक्तिकरण को समर्पित इस समारोह में सुप्रसिद्ध समाज-सेविका पद्मश्री सुधा वर्गीज, डा मृदुला प्रकाश, अरुण अग्रवाल, मीरा श्रीवास्तव, आशा अग्रवाल ने भी अपने विचार व्यक्त किए।

सभी कलाकार-बालिकाओं की प्रस्तुतियों की खूब सराहना हुई।

तीसरे सत्र में बालिका-विमर्श हुआ, जिसमें एक पक्ष में बालिकाएं थीं और दूसरे पक्ष में महिलाएं। दोनों ही पक्षों के विचार सामने आए। बालिकाओं ने लिंग-भेद पर खुलकर अपने विचार रखे। विविधा नाम से चौथा सत्र आयोजित हुआ, जिसमें आइ टी आई, दीघा की बालिकाओं ने एक लघु नाटिका की प्रस्तुति की। पटना विमेंस कॉलेज की छात्राओं ने भी गीत, नृत्य एवं योग की प्रस्तुति दी। बालिकाओं की बनाई गई कला-कृतियों की भी प्रदर्शनी लगाई गई थी। सभी लोगों ने इसकी भूरी भूरी प्रशंसा की। अंतिम सत्र में सभी प्रतिभागियों को प्रमाण-पत्र और पदक देकर सम्मानित किया गया। सत्रों का संयोजन शिवांजलि और अनुष्का ने और मंच संचालन शिवानी गौड़ ने किया।

पांच सत्रों में आयोजित इस कार्यक्रम में उद्घाटन के पश्चात, नारी-गुंजन, रेनबो होम्स, मूक-बधिर विद्यालय आशा दीप तथा स्कूल औफ क्रिएटिव लर्निंग की बच्चियों ने रंगारंग सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत किया। सुश्री आराध्या सहित

सिसकियां सड़क की

मैं शिथिल देह सी पड़ी जा रही हूं
दिन-रैन के अनवरत आवागमन से
श्रवण क्षमता मेरी विलुप्त हुई जा रही
भीषण ध्वनि-प्रदूषण के आघातों से

अब उकता चुकी हूं मैं
इस निरंतर यातायात के अवरुद्धन से
थक चली हूं मैं इस अविराम तेज़ी से
इस तेज गति की विकरालता से

छायादार वृक्षों की पंक्तियां थीं
कभी मेरे दोनों किनारों पे
नृत्य करती थी पुलकित हो तितलियां
जहां मकरंद-मदिर हो पुष्पों पे

कलरव करते थे जहां खग वृंद,
तरू विटप की हरी भरी डालो पे
अब धुएं का तमस है कंक्रीट से पटित
इस जीवन विहीन हर डगर पे

कलेजा मेरा भी कांप उठता है
दुर्घटनाओं के वीभत्स वाकयों से
सजल हो उठते हैं मेरे भी नयन
अनेक निदोर्षो की अकाल मृत्युओं से

निर्द्वंद्व हो बेहिसाब रौंदते हैं मुझे
सब अपनी -अपनी मनमानियों से
निष्कलंक होकर भी मैं कलंकिनी
होती हूं संपूर्ण विश्व की दृष्टि से

फिर भी उदास प्रतिध्वनि से अडिग हूं
यंत्रवत आवागमन की परिक्रमण में
व्यथा मेरे मन की कोई सुनेगा एक दिन
इंतज़ार में बैठी हूं मैं इसी आश्वासन में

पटना (सतकपुर,सरकट्टी) बिहार

अर्चना भारती नागेंद्र
वरिष्ठ साहित्यकार

ज्ञानपीठ सम्मान और हिंदी साहित्य की नई दिशा

त्रिभुवन लाल साहू

छत्तीसगढ़ के साहित्य जगत के लिए यह गौरवपूर्ण क्षण है कि हमारे प्रदेश के प्रतिष्ठित साहित्यकार विनोद कुमार शुक्ल को ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित किए जाने की घोषणा हुई है। यह न केवल उनके साहित्यिक योगदान का सम्मान है, बल्कि छत्तीसगढ़ की साहित्यिक परंपरा के लिए भी एक ऐतिहासिक उपलब्धि है।

राजनांदगांव के साहित्यिक परिवेश से निकले विनोद कुमार शुक्ल हिंदी साहित्य में अपनी विशिष्ट शैली के लिए जाने जाते हैं। उन्होंने भाषा और साहित्य में नए मुहावरे गढ़े, जिनकी छाप आधुनिक हिंदी लेखन पर स्पष्ट देखी जा सकती है। हालाँकि, मेरे लिए उनका और उनकी रचनाओं का परिचय प्रतियोगी परीक्षाओं के संदर्भ में हुआ, और मैंने उनकी कुछ रचनाओं के अंश ही सतही तौर पर पढ़े हैं। साहित्य का नवजात पाठक हूं, इसलिए उन पर लिखना मेरी क्षमता से परे है। फिर भी, यह क्षण मेरे लिए विशेष है, क्योंकि यह छत्तीसगढ़ के लिए पहला ज्ञानपीठ सम्मान है।

उनके उपन्यास नौकर की कमीज, खिलेगा तो देखेंगेऔर दीवार में एक खिड़की रहती थी कहानी संग्रह पेड़ पर कमरा,आदमी की औरत और महाविद्यालय इत्यादि काफी चर्चित रहे हैं। यह पुरस्कार न केवल श्री शुक्ल की रचनात्मकता का सम्मान है, बल्कि छत्तीसगढ़ की साहित्यिक पहचान को राष्ट्रीय स्तर पर स्थापित करने वाला क्षण भी है। उनकी इस उपलब्धि से छत्तीसगढ़ का हर साहित्य प्रेमी और हर नागरिक गर्व का अनुभव कर

रहा है। यह सम्मान प्रदेश के उभरते लेखकों को भी प्रेरित करेगा और छत्तीसगढ़ की साहित्यिक धारा को और समृद्ध करेगा।

विनोद कुमार शुक्ल ने अपनी रचनाओं के माध्यम से हिंदी साहित्य में 'जादुई यथार्थवाद' को नया रूप दिया। उनके शब्दों में जादू है, लेकिन वह आम आदमी के जीवन से ही उपजा हुआ है। उनकी कविता

हताशा से एक व्यक्ति बैठ गया था
व्यक्ति को मैं नहीं जानता था

हताशा को जानता था
इसलिए मैं उस व्यक्ति के पास गया

मैंने हाथ बढ़ाया
मेरा हाथ पकड़कर वह खड़ा हुआ

मुझे वह नहीं जानता था
मेरे हाथ बढ़ाने को जानता था

हम दोनों साथ चले
दोनों एक दूसरे को नहीं जानते थे
साथ चलने को जानते थे।

इस बात का प्रमाण है कि वे किस तरह मानवीय संवेदनाओं को सरल शब्दों में व्यक्त कर देते हैं।

छत्तीसगढ़ के लिए यह गौरव की बात है कि राज्य के किसी लेखक को पहली बार यह प्रतिष्ठित सम्मान मिल रहा है। यह न केवल शुक्ल जी की उपलब्धि है, बल्कि हिंदी साहित्य के उस रूप की भी जीत है, जो सरलता में गहराई खोजता है। उनके साहित्य ने यह सिद्ध कर दिया कि बड़े विचारों को व्यक्त करने के लिए भारी-भरकम भाषा की जरूरत नहीं होती बस, शब्दों में सच्चाई और संवेदनशीलता होनी चाहिए।

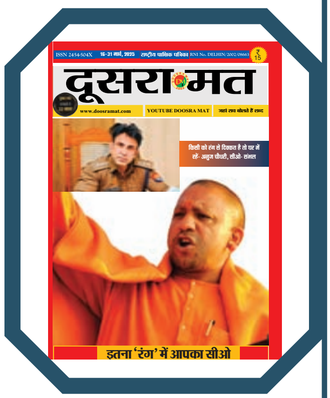

दूसरा मत

पढ़ें और पढ़ाएं

एक शुभचिंतक
नई दिल्ली

भारतीय साहित्य में समकालीन महिलाओं की आवाजें

विजय गर्ग

भारतीय साहित्य में महिलाओं की आवाज विविध आख्यानों में योगदान करती है और सामाजिक मानदंडों को चुनौती देती है। भारत में महिलाओं के लेखन का विकास प्राचीन से समकालीन समय तक फैला हुआ है। यह यात्रा बदलती धारणाओं और महिलाओं के सशक्तिकरण को दशार्ती है।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि प्राचीन साहित्य प्राचीन भारत में, महिला कवियों और विद्वानों ने उल्लेखनीय योगदान दिया। वेदों और उपनिषदों जैसे ग्रंथों में उनके कौशल की विशेषता है। लोपामुद्रा, गार्गी और मैत्रेयी प्रमुख आंकड़े हैं। उनके कार्यों ने भविष्य की महिलाओं के लेखन की नींव रखी।

मध्यकालीन काल भक्ति आंदोलन ने एक बहुत ही महत्वपूर्ण युग को चिह्नित किया। इसने महिला लेखकों को आध्यात्मिक और सामाजिक विषयों को व्यक्त करने का अधिकार दिया। उल्लेखनीय कवियों में मीराबाई और अक्का महादेवी शामिल हैं। उन्होंने सामाजिक सम्मेलनों को चुनौती दी और दिव्य प्रेम का जश्न मनाया। उनकी कविता समकालीन चर्चाओं में प्रभावशाली बनी हुई है।

औपनिवेशिक युग ब्रिटिश उपनिवेशवाद ने महिलाओं की शिक्षा और साहित्यिक अभिव्यक्ति को प्रभावित किया। इसने महिलाओं को लिखने और प्रकाशित करने के लिए रास्ते खोले। सरोजिनी नायडू इस दौरान एक प्रमुख व्यक्ति के रूप में उभरी थीं। उनकी कविता ने राष्ट्रवादी विषयों और व्यक्तिगत अनुभवों को संबोधित किया। कमला दास को भी महिलाओं के मुद्दों और पहचान पर ध्यान केंद्रित करते हुए प्रमुखता मिली।

क्षेत्रीय साहित्य भारतीय साहित्य क्षेत्रीय आख्यानों से समृद्ध है। विभिन्न भाषाओं की महिला लेखक योगदान करती हैं। इस्मत चुगताई ने उर्दू में लिखा, जो सामाजिक मुद्दों को दशार्ता है। कमला मार्कंडेय ने अपनी मार्मिक कहानियों के साथ अंग्रेजी साहित्य का प्रतिनिधित्व किया। तमिल लेखक बामा जाति और लिंग की गतिशीलता की पड़ताल करता है।

महिला साहित्य में विषय नारीवाद और लिंग मुद्दे महिलाओं का साहित्य अक्सर पितृसत्ता और लैंगिक भूमिकाओं की पड़ताल करता है. लेखक सामाजिक मानदंडों को चुनौती देते हैं और महिलाओं के अधिकारों की वकालत करते हैं। उनके कार्य परिवर्तन को प्रेरित करते हैं और लिंग मुद्दों के बारे में जागरूकता बढ़ाते हैं।

पहचान और अंतर जाति, वर्ग और धार्मिक पहचान का प्रतिनिधित्व महत्वपूर्ण है। महिला लेखक व्यक्तिगत और राजनीतिक कथाओं को आपस में जोड़ते हैं। यह अंतर्द्वंद्व साहित्य में पहचान पर प्रवचन को समृद्ध करता है।

सांस्कृतिक विरासत और परंपरा लोकगीत और पौराणिक कथाएं साहित्य में महिलाओं की आवाज को आकार देती हैं। लेखक पारंपरिक आख्यानों को नारीवादी दृष्टिकोण से पुनः व्याख्या करते हैं। यह पुनः परीक्षा सांस्कृतिक विरासत के बारे में नई महत्वपूर्ण जानकारी प्रदान करती है।

साहित्यिक रूप और शैली कविता कविता आत्म-अभिव्यक्ति के लिए एक शक्तिशाली माध्यम के रूप में कार्य करती है। यह महिलाओं को अपने अनुभवों को खुलकर आवाज देने की अनुमति देता है। कमला दास एक उल्लेखनीय कवि हैं जिन्होंने प्रेम और पहचान के बारे में लिखा है। उसका काम कई पाठकों के साथ प्रतिध्वनित होता है।

कल्पना उपन्यास और लघु कथाएँ महिलाओं के जीवन की जटिलताओं को दर्शाती हैं। ऐतिहासिक कथा और जादुई यथार्थवाद सहित विभिन्न शैलियों की खोज की जाती है। लेखक समृद्ध नैरेटिव बनाते हैं जो सामाजिक चुनौतियों को दर्शाते हैं।

गैर-कथा और संस्मरण आत्मकथात्मक लेखन और निबंधों ने प्रमुखता प्राप्त की है। महिला लेखक व्यक्तिगत अनुभवों और सामाजिक टिप्पणियों का दस्तावेजीकरण करती हैं। उनके कार्य समकालीन मुद्दों के बारे में मूल्यवान महत्वपूर्ण जानकारी प्रदान करते हैं।

समाज पर प्रभाव जागरूकता बढ़ाने में महिला साहित्य महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह लैंगिक असमानता और जातिगत भेदभाव जैसे सामाजिक मुद्दों को संबोधित करता है। इन लेखों का प्रभाव नारीवादी आंदोलनों तक है। वे सांस्कृतिक प्रवचन को आकार देते हैं और भारत में सक्रियता को प्रेरित करते हैं।

शिक्षा पर महिला साहित्य का प्रभाव महिला साहित्य ने शैक्षिक आख्यानों को बदल दिया है। यह पाठ्यक्रम में विविध आवाजों को शामिल करने को प्रोत्साहित करता है। यह बदलाव छात्रों के बीच महत्वपूर्ण सोच और जागरूकता को बढ़ावा देता है।

भारतीय महिला लेखकों की वैश्विक मान्यता भारतीय महिला लेखक अंतरराष्ट्रीय पहचान हासिल कर रही हैं। उनके कार्यों का कई भाषाओं में अनुवाद किया जाता है। यह वैश्विक आउटरीच उनकी आवाज और दृष्टिकोण को बढ़ाता है।

भारतीय साहित्य में महिलाओं की आवाजों का भविष्य भारत में महिला साहित्य का भविष्य आशाजनक दिखता है। लेखकों की नई पीढ़ियां उभरती रहती हैं. वे नए विचार लाते हैं और मौजूदा आख्यानों को चुनौती देते हैं। डिजिटल युग उनके काम के व्यापक प्रसार के लिए मंच प्रदान करता है।

साहित्यिक त्योहारों की भूमिका भारत में साहित्यिक त्योहार महिलाओं की आवाज मनाते हैं। वे लेखकों को अपना काम साझा करने के लिए एक मंच प्रदान करते हैं। ये घटनाएं लिंग और साहित्य पर चर्चा को प्रोत्साहित करती हैं। वे लेखकों के बीच नेट-वर्किंग को भी प्रोत्साहित करते हैं।

महिला साहित्य और सोशल मीडिया सोशल मीडिया ने साहित्यिक जुड़ाव को बदल दिया है। महिला लेखक व्यापक दर्शकों तक पहुंचने के लिए इन प्लेटफार्मों का उपयोग करती हैं। वे अपना काम साझा करते हैं और सीधे पाठकों से जुड़ते हैं। यह बातचीत समुदाय और समर्थन को प्रोत्साहित करती है।

पकड़े गए दोस्त के नाम

अशोक गौतम
वरिष्ठ व्यंग्यकार

ऐ! मेरे बचपन के दोस्त! जबसे मुझे सोशल मीडिया से पता चला है कि तुम रिश्वत लेते हुए पकड़े गए हो, और वह भी रंगे हाथों, मन बहुत खिन्न है। कहीं जाकर मरने को मन कर रहा है, पर मरने को सही जगह नहीं मिल रही है। पता ही नहीं चल रहा कि कहां जाकर मरूं?

सच सच बताना दोस्त! जब तुम बचपन से लेकर कल तक कोई भी ग़लत काम करते कभी पकड़े नहीं गए, तो आज रिश्वत लेते हुए कैसे पकड़े गए? मुझे तो तुम्हारे रिश्वत लेते हुए पकड़े जाने पर यक़ीन ही नहीं हो रहा है।

जहां तक मेरा मानना है रिश्वत लेते हुए तुम पक्का पकड़े नहीं गए होंगे। ज़रूर किसी ने तुम्हें पकड़वाया होगा। तुम्हें कोई रिश्वत लेते हुए पकड़े, ये मैं कदापि नहीं मान सकता हूं। मुझे लगता है कि ज़रूर यह किसी तुम्हारे दोस्त में छुपे दुश्मन का काम है। ज़रूर वह तुम्हारी रिश्वत लेने की तरक़्क़ी से ईर्ष्या करता होगा। दोस्त! जिसके पास ऐसे दोस्त हों, उसे दुश्मन रखने की ज़रूरत नहीं होती। दुश्मनों से तो सचेत रहा जा सकता है, पर आस्तीन में दुश्मन सी घात लगाए ऐसे हंसमुख दोस्तों से नहीं।

यह भी सच है कि तुम रिश्वत लेने में ग़जब के माहिर थे। पर मेरे बार बार

समझाने के बाद भी तुम जो लापरवाही करते रहते थे, ये सब उसी का नतीजा है। काश! तुमने रिश्वत लेते हुए मेरी हिदायतों को गंभीरता से लिया होता!

मुझे दुःख तुम्हारे पकड़े जाने का नहीं है, दुःख इस बात का है कि जब तुम जैसे घाघ रिश्वत लेने के माहिर ही पकड़े जाने लगें, तो मेरे जैसे मिडिल क्लास रिश्वतख़ोरों का क्या होगा? यह सोच मैं बिन रिश्वत लिए ही बहुत परेशान

हूं। हर वक़्त अपने हाथ देखता रहता हूं कि कहीं वे बिन रिश्वत लिए ही रंग तो नहीं गए? सैलरी के नोट लेते हुए भी अब हाथ कांपने लगे हैं। मन कर रहा है कि अब रिश्वत लेने का कोई नया तरीक़ा इजाद करूं, ताकि रिश्वत भी मिल जाए, और हाथ भी न रंगे।

बुरा मत मानना दोस्त! मैंने कितनी ही बार तुम्हें कहा भी था कि रिश्वत ज़रूर लो, पर ज़रा संभल कर लो। अब रिश्वत लेने में अतिरिक्त सावधानियों की बहुत जरूरत है। अब पहले जैसा माहौल नहीं रहा। पर तुमने हमेशा मेरी बात को हंसी मज़ाक़ में लिया। तुम्हें लगता था कि तुम रिश्वत लेने में मास्टर हो गए हो। पर दोस्त! छूट जाने के बाद भी मेरी एक बात याद रखना कि यहां पर डूबता वही है, जो अपने को कुशल तैराक मानने की ग़लती करता है। दोस्त! मानता हूं रिश्वत के बिना आज किसी का भी गुज़ारा नहीं। कारण, एक दूसरे की देखादेखी में न चाहते हुए भी, हम सबने अपने ख़र्चे इतने फैला दिए हैं कि जो ज़िंदगी की चारपाई पर रिश्वत की चादर न फैलाएं तो गर्मियों में तो गर्मियों में, दिसंबर में भी ईएमआई की किस्तों के मच्छर पूरे बदन को काटते रहें।

यह सच है दोस्त कि जिनके ऊपर रिश्वत लेने वालों को सज़ा देने का भार है, अब तो वे भी रिश्वत लेने लगे हैं। क्योंकि आज ईमानदारी मिथ्या है, रिश्वत सत्य ही नहीं, परम सत्य है। वैसे दोस्त! बिन रिश्वत नौकरी कोई नौकरी थोड़े होती है। जो बिन रिश्वत लिए नौकरी करते हैं, वे अपने बच्चों को उधार छोड़कर मरते हैं। उन्हें समाज में तो छोड़ो, घर में भी कुत्ता नहीं पूछता। इसलिए सज्जन से सज्जन तक रिश्वत वाले पद पर पोस्टिंग करवाने के लिए कहां-कहां से ज़ोर नहीं लगाते? किस-किस का पुश नहीं लगवाते। तुमने ही क्या, मैंने भी लगाए, पर कम ही बार सफल हुआ।

अब पकड़े गए हो तो कोई बात नहीं!
गिरते हैं शहसवार ही मैदान-ए- जंग में,
वो ईमानदार क्या गिरेंगे जो वेतन भी फूंक फूंक कर लेते हों।

पर केवल दुःख इस बात का आज भी है और कल भी रहेगा कि तुम मात्र तीस हज़ार लेते पकड़े गए। इस मामले में तुम अपनी नाक कटी मानो या न, पर मैं तुम्हारा परम हितैषी होने के चलते अपनी पूरी नाक कटी ज़रूर मान रहा हूं। लाखों करोड़ों रिश्वत लेने के दौर में तीस हज़ार भी कोई रिश्वत होती है दोस्त? लानत है मुझपर कि मेरा दोस्त इतनी कम रिश्वत लेता हुआ पकड़ा गया। अरे हम तो वो बचपन से ही न पकड़े जाने वाले वे कुशल चालाक थे, जो स्कूल से लेकर कल तक पकड़े ही नहीं गए थे। जब स्कूल में परीक्षाएं होती थीं, तो पता है, हम कभी नक़ल करते नहीं पकड़े जाते थे। जब हमारे पकड़ने का डर होता था, तो हम झट अपनी पर्ची किसी दूसरे को थमा देते थे।

तुम्हें याद है जब हमने चौथी में हिंदी के मास्टर जी की अलमारी से हिंदी का फाइनल पेपर ही सरका लिया था। सारी क्लास की पिटाई हुई थी, पर हम मज़े से बच गए थे। और उस पेपर में सौ में से सौ आए थे। अब भगवान से बस, यही प्रार्थना कि वे तुम्हें जितनी जल्दी हो सके फिर रिश्वत लेने का मौक़ा दे। तुम अपने स्तर पर भी कोशिश कर ऐसे बंदे ढूंढ़ना, जो रिश्वत
लेकर रिश्वत लेने वालों को बचाने में माहिर हों। एक दोस्त होने के नाते मैं तो ख़ैर की दुआ करूंगा ही।

सोलन-173212 हि.प्र.

पुत्र विदेश में मां स्वदेश में :आधुनिक प्रेम...?

दिनेश गंगराड़े
वरिष्ठ व्यंग्यकार

व्यक्ति जीवन मेसफलता प्राप्त कर गर्व महसूस करता है। घमंडरत रहता है कि उपलब्धियों ने उसके कदम चूमे। गर्व अनुभव करना बहुत सुखद, सौभाग्य का प्रतीक है। जब-जब भी देश ने उपलब्धियां हासिल की हर नागरिक ने प्राउड फील किया। सब गर्व से अकड़े रहे। कुछ समय बाद हर सफलता पर लोग घमंड से फट पड़ने लगते है। उप्लब्धिकारक ऊंचाइयों पर जाना गर्व का अनुभव कराता है। बचपन मे पीठ पर लादकर पिता घोड़ा बनता था, उसका नाजुक स्पर्श सुकून देता था। सारे जहां से अच्छा.... तथा अंग्रेजी कविता जॉनी-जॉनी, यस पापा..उसके मुंह से सुनते तो शुगर सा मीठा माहौल हो जाता,अब पढ़कर वो कम्प्यूटर इंजीनियर बना। जब उसके पास जॉब न था तो आलसी सा पड़ा रहता,तब पिता मजाक में कहता था-ये अमेरिका काबिल है। समय देखिए आज वो वही है,पर पिता उम्र के इस पड़ाव पर बुढापा काट रहे हैं। जो कुढ़ापा बन गया है। वे सड़ापा की ओर मुखातिब है। कविता की बुलबुल उड़कर यूएसए चली गई। हिन्दुस्तां में अब सिर्फ पापा अकेले रह गए हैं। यूएसए के बगीचे में बुलबुल उड़ रही है और गा रही है-सारे जहां से अच्छा यूएसए हमारा..क्योंकि उसे अमेरिका की नागरिकता जो मिल गई है। अंग्रेजी कविता में खाली पापा याद रहे, उसने शुगर सी मीठी बातें करना अख्तियार कर लिया है।ढाई-तीन साल में मुंह दिखाकर, हा.. हा.. कर वापस चला जाता है।ये कहते हुए कि आप गर्व महसूस करो? मैं पैसे जोड़कर बल्लू से श्री बल्लू सर बनकर लौटूंगा? पढ़ा था कि पृथ्वी गोल,चपटी है लेकिन लड़के के विदेश जाने पर लगता है कि धरती सपाट है कतई गोल नही,लंबी है, खूब लंबी,महंगाई की तरह, जिसका कोई ओर है न छोर है? सोचा था वो सहारा बनेगा किंतु अब पिता बेसहारा, तथा वो खुद उसके बच्चों का सहारा बन गया है किंतु खुद वहां निःसहाय सा है? लौट के बुद्दू देश को आए वो चाहता नही है क्योंकि एक डॉलर,अस्सी रुपए उपजती है और इस मातृ भूमि में उसे भारी मारामारी, अव्यवस्था दिखती है? बुध्द का देश, बुद्दू सपूत उपज रहे हैं जो स्वदेश प्रेम भूल रहे है? उंगली थामकर जिन्हें चलना सिखाया वें टेलेंटेड अब सपोर्ट करने की बजाय दिशानिर्देश की उंगली दिखा रहे है। कभी उंगली पकड़ने वाला अब खुद पंजा दिखाकर वीडियो कॉल पर हाय, हलो करता है।पिता नौकरी पर थे तो बच्चे की सुविधाएं हेतु दौड़ते थे,आज वो जॉब में विदेश है तो पिता अपंग से दौड़ ही नही पा रहे हैं? पहले पिता भगवान थे अब पैसा है। पहले बापू सर्व शक्तिमान थे अब उसका तथाकथित देश? जो विश्व भर में आधी रोटी में दाल लेता फिरता है? कर्तव्य निभाने के वक्त वो यूएसए का बाशिंदा है? कई लाख उजाड़ कर अब लगता है,उसे अयोग्य बनाया? सॉफ्टवेयर इंजीनियर बनकर अब वो मां को उल्लू बना रहा है? कभी उसके लिए पिता घोड़ा बनते थे अब वो उसके परिवार का टट्टू बन गया है? वैसे वीडियो कॉल रोज करता है,उसकी नीयत में खोट नही डॉलर नोट है? पहले पिता को उससे शिकायत रहती थी अब उम्मीदें? पर उसके पास डॉलर है, समय नही, बस उसकी बातें मीठी, चतरी, सफा-ईदार, गोल-गोल सी रह गई है?। विज्ञान की तरक्की का लाभ लेते हुए यदि कोई पुत्र अपने पिता की अंत्येष्टि में विदेश से ही वीडियो कॉल से ही शामिल हो पंचलकड़ी समर्पित कर तथा नम आंखों से विदाई दें तो कोई अतिशयोक्ति नही होगी?अब ढेरों काम वो वीडियो कॉल से ही निपटाने लगा है, परिजनों के निपटने तक यही चलेगा शायद? नानी, दादी, काकी,के दुनिया कूच करने पर वो बस फुनियाता रहा, ठंडे छींटे डालता रहा, पर उपस्थित होने का जतन नही कर पाया? बचपन मे ये सब कुछ थी अब डॉलर सब कुछ है। एक डॉलर अस्सी रुपए उपजती है तो कहां का नाता-रिश्ता? मगज में पैसा घुस गया है, वो बड़ा व्यापारी जो बन गया है। इसलिए दूरभाष से दूर से ही सारे काम, सारे उत्तरदायित्व सलटाता है। पारिवारिक दायित्व में उलझा हुआ व्यक्ति अब खुद को असहाय,निर्बल महसूसता है।

क्या दंपत्ति को अपनी संतति को ज्यादा सुशिक्षित नही करना चाहिए? इसे कहते हैं बड़ा भाटा तोक कर अपने टांगडों पर जोर से जरकना। इस मुद्दे पर उससे बात करो तो वो बकता है घर बैठो और अंडशंड गर्व महसूस करो। लोगों को जब मिलो तो घमंड से अकड़ कर बताओ। बाकी भगवान भरोसे?

इंदौर, 452010 म.प्रदेश

भगवती सक्सेना गौड़
वरिष्ठ साहित्यकार

लघुकथा

दादी

रंजीता सुबह की पूजा करके निकली ही थी कि बहू रीवा और बेटे कबीर ने कहा, 'मम्मी, आफ़िस के लिए देर हो रही, हमलोग निकल रहे आप अक्षय को देख लेना, अभी सो रहा।'

'हां, वो नैनी आएगी न, देख लूंगी।'

'नहीं, मम्मी, वो तो गांव चली गई, हम ने भी कहा अब तो अक्षय की दादी रिटायर हो गयी, कोई ऑनलाइन क्लास भी नही लेना है, पार्क में भी घुमा देंगी, सब सम्भाल लेंगी। और मम्मी इनको पालक पनीर आपके हाथ के बने ही खाना है, चपरासी को भेजूंगी, लंच दे दीजिएगा।'

और दोनों बाइक में बैठकर उड़ चले।

अब रंजीता सोच में पड़ी है, रिटायरमेंट सरकार क्यों देती है ?

बेंगलुरु

भगवती सक्सेना गौड़ की कविता मां

ब्रह्मांड की जब रचना हुई,
तेरी सरंचना हुई मां
तुझे बनाकर ईश्वर
बेख़ौफ़ हो सोता होगा !
मां के बराबर कोई नहीं
कितनी प्यारी है तू मां
मेरे लिए भगवान है तू मां
हर कष्ट सहनशील हो सहती मां
तू अनमोल सी कृति है मां
मन शुद्ध आत्मा पवित्र है मां
बिन बोले अभिव्यक्ति परखती मां
तमाम रिश्तों को दुनिया के
रफ़ू कर सहेजेती मेरी मां
फिर क्यों कमजोर पलों में आंसू
बहाती हो मेरी मां,
तेरे हर आंसू को खुशी में बदलूंगी,
नहीं मां, नहीं मैं बहने नहीं दूंगी व्यर्थ,
बहुत क़ीमती हैं तेरे सपने और आकांक्षा
आंसू को मुस्कानों में बदलूंगी,
तेरी हर इच्छा पूरी होगी मां
ईश्वर की दूत बन आयी हो मेरी मां!!

बेंगलुरु

अधूरी प्रार्थना

अर्चना त्यागी

वरिष्ठ कथाकार

संक्षिप्त परिचयः
2020 से सक्रिय लेखन।
सम्मान/ पुरस्कार,
राष्ट्र शक्ति शिरोमणि सम्मान, 2025,संपर्क क्रांति परिवार।
जयपुर साहित्य सम्मान,2025, जयपुर साहित्य संगीति,कृति₹दीवार के पार₹, कहानी संग्रह।
सर्वश्रेष्ठ साहित्य सम्मान 2024, नारी अस्मिता पत्रिका , बड़ोदरा, कृति सपने में आना मां, लघुकथा संग्रह।
उत्कृष्ट लेखन बाल साहित्य कार सम्मान 2024, अणुव्रत विश्व भारती, राजसमंद।
वैश्विक साहित्य सम्मान,2024, निर्दलीय प्रकाशन,भोपाल
पंडित झाबरमल स्मृति पत्रिका सृजनात्मक साहित्य सर्वश्रेष्ठ कथाकार (द्वितीय) पुरस्कार 2023
सुभद्रा कुमारी चौहान सम्मान, गुफ्तगू संस्था प्रयागराज, 2022
राजस्थान महिला रत्न, विश्व हिंदी रचनाकार मंच, 2022
वूमेन ऑफ ऑनर, नेक्सस पीआर मीडिया राजस्थान,2019
प्रकाशन -
नवभारत टाइम्स और गृहलक्ष्मी पत्रिका के वार्षिकांक (2024) सहित लगभग सभी राष्ट्रीय, अंतर्राष्ट्रीय वायवसायिक एवम् साहित्यिक पत्रिकाओं और समाचार पत्रों में नियमित रूप से रचनाएं प्रकाशित।
आकाशवाणी जोधपुर से कहानियों का नियमित प्रसारण।
हिंदी लेखक परिवार यू ट्यूब मंच पर नियमित साहित्यिक कथा वाचिका के रूप में कार्यरत।
संप्रति - स्वतंत्र लेखिका, कथा वाचक,मंच संचालक एवं कैरियर परामर्शदाता।
प्रकाशित कृतियां
तीसरा मोड़ कहानी संग्रह, प्रकाशनाधीन
मुसीबतें पर्वत सही काव्य संग्रह,
प्रकाशित कृतियां ,
चीनी का पेड़ बाल कहानी संग्रह
दीवार के पार (पुरस्कृत) कहानी संग्रह
सपने में आना मां (पुरस्कृत) लघुकथा संग्रह

गोविंद नाम से ही गोविंद नहीं है, मन से भी गोविंद जी का बड़ा भक्त है। रोज सुबह काम पर जाने से पहले भगवान के सामने हाथ जोड़ना नहीं भूलता है। घर वापिस आते ही गोविंद जी को स्मरण करना उसकी आदत में शामिल है। बस एक ही शिकायत रहती है उसे। गोविंद जी मेरी बात तो मानते हैं लेकिन समय निकलने के बाद। मेरी श्रृद्धा को गोविंद जी उस स्तर का नहीं मानते हैं जिससे तुरंत आशानुकूल परिणाम मिल जाए। गोविंद जब भी अपने इष्ट देव गोविंद जी के सामने जाता है, यही बात उसके मन में आती है। उसकी दिनचर्या में कोई बदलाव नहीं आता है। वही दिन भर की भाग दौड़ और गोविंद जी से शिकायत।

घर में गोविंद अपने दादाजी से सबसे अधिक प्यार करता है। उन्हे परेशान देखकर वह सारे काम धाम छोड़कर बस उनकी तीमारदारी करने लगता है। इसीलिए दादाजी अपनी बीमारी के बारे में कभी गोविंद से बात नहीं करते हैं।

शाम को गोविंद घर वापिस आया तो दादाजी नहीं मिले। मां ने यही कहा कि वो खाना खा कर सो रहे हैं। गोविंद दोस्तों के साथ फिल्म देखने चला गया। वापिस आया तो चाचा खाने का टिफिन लेकर कहीं जा रहे थे। गोविंद पूछना चाहता था लेकिन चाचा जल्दी से निकल गए। गोविंद को थोड़ा शक हुआ। बिना कुछ बोले वह सीधे दादा के कमरे की ओर चल पड़ा। कमरा बाहर से बंद था। गोविंद का शक और भी बढ़ गया लेकिन वह नहीं माना और दरवाजा खोलकर दादा के कमरे में चला गया। दादा वहां नहीं थे। पीछे से मम्मी भी कमरे में आ गई थी।

तुम्हारे दादा को सीने में दर्द की शिकायत थी इसलिए डॉक्टर ने हॉस्पिटल में एडमिट कर लिया है। रात भर वहीं रहेंगे। कल शायद छुट्टी मिल जायेगी।₹ मां ने बताया तो गोविंद को गुस्सा भी आया लेकिन एक खयाल उससे भी तेजी से आ रहा था। वह घर में बने मंदिर में जाकर गोविन्दजी की मूर्ति के सामने हाथ जोड़कर मन ही मन बोला, गोविन्दजी दादा के साथ ऐसा नहीं। आप उनके हिस्से की परेशानी मुझे दो लेकिन उनको ठीक कर दो।

गोविन्दजी पहले की तरह ही मुस्कुरा रहे थे। गोविंद भारी मन से अस्पताल चला गया। रात भर बाहर बैठा रहा। दादाजी आईसीयू में थे। डॉक्टर भी उनकी स्थिति के बारे में कुछ स्पष्ट नहीं बोल पा रहे थे। रात में बेंच पर बैठे बैठे गोविंद की आंख लगी तो सपने में दादाजी ही दिखे।

अनिल किशोर सहाय की दो कविताएं

वक़्त बुरा है

कितना मरेगा आदमी
इस क़हर से
कहीं ज़्यादा तो नहीं
नफ़रत के ज़हर से

वक़्त बुरा है
तो क्या हुआ
लोंगो की सोच पर
पहरा कड़ा हुआ
रहना है साथ ही
क्यों निकले बद्दुआ

जो हैं ग्रसित वे भी
निकलेंगे लहर से।

(कोविड महामारी के समय)

दस्तूर

हर जगह आभार जताइए
और मनचाहा पाइए

मन को समझाइए
पर यह दस्तूर निभाइए

चीज़ें आपकी पसंद की गईं
इससे ही ख़ुश हो जाइए

उदास मत होइए
सोचिए और क्या चाहिए

फ़क़्त इतना जान लीजिए
इसे फ़ितरत बनाइए

प्रकाशन/संपादन-
दिनमान, वागर्थ, कथाक्रम, कृति बहुमत, ककसाड़ ,स्त्रीकाल, सबलोग, व्यंग्य यात्रा, प्रेरणा अंशु, प्रणाम पर्यटन, दैनिक प्रदीप, प्रभात खबर, हिन्दुस्तान, शुभम संदेश, झारखंड की समकालीन कविता, शाल वन की धरा से, पत्रकारिता कल से आजतक-सहित पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएं प्र-काशित।
दो एकल कविता संग्रह- क्रांति के दिन और महज़ आदमी प्रकाशित।
सप्तम स्वर (गांधी शांति प्रतिष्ठान केन्द्र भागलपुर से प्रकाशित) भागलपुर का सच (सूचना और जनसंपर्क विभाग, बिहार,पटना से प्रकाशित) स्वर्ण तरंग (आकाशवाणी,रांची का स्वर्ण जयंती विशेषांक) तीनों के संपादक मंडल में।
सम्मान-
(1) कलक्टर सिंह केसरी स्मृति सम्मान (बिहार हिन्दी साहित्य सम्मेलन, पटना) (2) तिलका मांझी राष्ट्रीय सम्मान (अंग फाउंडेशन, भागलपुर) (3) जे पी सेनानी सम्मान (प्रदेश लोक समिति, जयप्रकाश विचार मंच और चौहत्तर चेतना मंच, झारखंड) (4) महेन्द्र प्रसाद सिंह स्मृति सम्मान (झारखंड साहित्य अकादमी स्थापना संघर्ष समिति)
(5)साहित्य सेवा भूषण सम्मान (झारखंड अंगिका समाज)
कार्य-आकाशवाणी (प्रसार भारती) मे वरीय प्रोग्राम प्रोड्यूसर पद से सेवानिवृत्ति पश्चात स्वतंत्र लेखन।
बूटी रोड,रांची-834012

चलो गोविंद, गोविन्दजी की पूजा अर्चना करते हैं। गीता का पाठ कर लेते हैं। तुम मुझे गीता पढ़कर सुनाना। गोविंद दादाजी को ठीक देखकर बहुत खुश था लेकिन गोविन्दजी से नाराज था।

दादा, गोविन्दजी मेरी प्रार्थना पर ध्यान नहीं देते हैं। ऐसा नहीं होता तो आपको बीमार नहीं करते।

प्रार्थना सच्चे मन से करोगे तो जरूर पूरी होगी। हो सकता है तुम जल्दी जल्दी में अधूरी प्रार्थना ही करते हो। सोचकर देखना।ग़ गोविंद की आंख खुली तो दादाजी सामने नहीं थे। लेकिन उसकी समझ में सब आ गया था। सुबह होते ही गोविंद अस्पताल के मंदिर में बैठकर प्रार्थना कर रहा था।
दादाजी को तीन दिन बाद छुट्टी मिल गई। गोविंद उन्हे लेकर घर पर आ गया। अब रोज दादाजी को गीता पढ़कर सुनाना उसका नियम बन गया था। गोविन्दजी से नाराजगी भी अब नहीं रही थी।

अर्चना त्यागी

उत्तराखंड 247667

कैलाश मनहर की चार ग़ज़लें

1.

चौड़ी चिकनी सड़कों पर ये लंबे - लंबे पुल होना
जल,जंगल और जमीन का फिर धीरे-धीरे गुल होना

सत्ताधीशों और सेठिया सामंतों के सौदे में
है विकास का सीधा फण्डा आपस में मिलजुल होना

क़र्ज़ा लेकर विश्वबैंक से लालच देना जनता को
सिखा दिया है दूर दूर ही मेहनत से बिल्कुल होना

सुविधाजीवी बने नागरिक लुप्त हो रही चेतनता
संवेदन-संघर्ष परस्पर भूल गये व्याकुल होना

जाग रही है कविता मेरी देख रही है बस्ती की
मीठी नींद में आज़ादी के सपनों का ढुलमुल होना

2.

दुःख चाहे कितना भी पाना ठकुर-सुहाती मत करना
पूँछ हिला कर कुत्ते जैसे चरण चाटना कभी नहीं

स्वामिभक्त बन कर मत करना हां में हां अन्यायी के
स्वार्थ साधने को ग़रीब की जेब काटना कभी नहीं

अपने हक की ख़ातिर कोई तुमसे अगर मदद चाहे
साथ खड़े रहना हरदम तुम उसे नाटना कभी नहीं

स्वाभिमान को बेच के अपना हाथ कभी मत फैलाना
ज़हरीले जल से जो सींची फसल लाटना कभी नहीं

ऐ मेरे मन! संघर्षों में पलते हुये याद रखना
कपट-सन्धि और समझौतों से राह पाटना कभी नहीं

3.

बहुत है चिल्ल पौं, भाई हुआ है क्या कहीं पर कुछ
यहां तो कुछ नहीं लगता, हुआ होगा वहीं पर कुछ

न अब पहले-से मौसम हैं, न पहले जैसी रुत है अब
न अपना आसमां में कुछ, न अपना है ज़मीं पर कुछ

बहुत उम्मीद से हर साल हम उत्सव मनाते हैं
हरेक उम्मीद दे जाती है, आंखों में नमी, पर कुछ

वो कहते हैं कि अच्छे दिन तुम्हारे आने वाले हैं
बुराई कर रही है वार दुःखों का सभी पर कुछ

उधर अल्लाह की मर्ज़ी, इधर भगवान की इच्छा
लगा सकता नहीं तोहमत,कोई भी आदमी पर कुछ

4.

ओ साहब जी अब अवाम को यों हड़काना छोड़ भी दो
ऊंचे सुर में डाँट-डपट कर अब बकियाना छोड़ भी दो

छोड़ दो नीचे वालों से अब करना उगाही महिने की
रिश्वत का हिस्सा ऊपर तक अब पहुंचाना छोड़ भी दो

कभी कभी तो दाल-भात का भोजन तुम भी किया करो
रोजाना ही मुर्ग-मुसल्लम मज़े से खाना छोड़ भी दो

पब्लिक से सीखो रहना कुछ स्वाभिमान से तन कर तुम
नेताओं के सामने झुक कर अब मिमियाना छोड़ भी दो

सरकारें तो आती जाती रहती हैं अफ़सर साहब
बदली के डर से यों अपने सिर को झुकाना छोड़ भी दो

मनोहरपुर(जयपुर-राज.)

मैं अनजान हूं

हितेश्वर बर्मन चैतन्य

बेशक तुम्हारे लिए मैं अनजान हूं
पर मैं तुम्हारा दुश्मन तो नहीं !
भगवान की मूर्ति को रोज पुजते हो
पर अनजान आदमी को देखकर,
खानदानी दुश्मन की तरह क्यों घूरते हो?
भगवान पर मर मिटने वाले !
जरा दो पल मुझ अनजान से भी,
हंसकर बात तो कर लो।
न मैं तुम्हारा सम्पत्ति लूटने आया हूं
न मैं तुम्हें धोखा देने आया हूं!
मैं तो बस तुमसे पता पुछने आया हूं
अनजान हूं मैं तुम्हारे इस शहर से
अजनबी इन भुलभुलैया डगर से
मुझे मेरे गंतव्य का पता तो बता दो?
अनजान होना कोई गुनाह तो नहीं है!
मुझे इतना तो मत सताया करो
सिर्फ पता बताने के लिए ही,
तीखे स्वर से मुझे रुलाया ना करो
सिर्फ़ एक पल के मुलाक़ात में
मुझे चोर-लुटेरा तो मत समझो
भीड़ से भरी इस दुनिया में
सबको एक जैसा तो मत समझो
क्या मतलब तुम्हारे शिक्षित होने का !
जब तुम अच्छे-बुरे का पहचान नहीं कर सकते
अनजानों की भरी बस्ती से
क्या तुम अपने जैसे एक भी नहीं ढूंढ सकता?

बिलाईगढ़ (छ.ग.)

विगत 23 वर्षों से देशहित में समाज-निर्माण के संकल्प के साथ

न हम डरते है न डराते हैं
हम देशप्रेम की भावना जगाते हैं

अगर आप में है जोश और
देश से प्यार

तो आइए दिल्ली से प्रकाशित
राष्ट्रीय पाक्षिक पत्रिका
दूसरा मत
के साथ

अगर शिक्षक, प्रोफेसर, इंजीनियर और डॉक्टर बनते हो तो हमेशा एक ही काम करोगे लेकिन पत्रकार बनते हो तो दुनिया समझने को मिलेगी, दुनिया समझाने को मिलेगी। दुनिया को पढ़ने का मौक़ा मिलेगा, दुनिया को पढ़ाने का मौक़ा मिलेगा

हम आपके हाथ में देते हैं क़लम
समाज-निर्माण की ताक़त के साथ।

योग्यता
खबरों की समझ
और देश के साथ
सच्ची प्रेम-भावना

सोचो, समझो और दूसरा मत से जुड़ो

संपर्क : +91-9643709089

47 YEARS OF EXCELLENCE
हार्दिक शुभकामनाएं
!! RADHA SOAMI JI !!
Kasturi Jewellers®
SINCE 1976
100% HALLMARK JEWELLERY SHOWROOM
#GOLD #DIAMOND JEWELLERY #SOLITAIRES
100% Lifetime Maintenance Free
100% Buy Back Diamond Jewellery
100% Certified Diamond Jewellery
Shop No. 15, 16, 17, 18, SDM Market, Mangal Bazar Road, Uttam Nagar, New Delhi-110 059
Shop No. 54-55, Main Pankha Road, Opp. Sagar Pur Police Station, New Delhi-110 046
Kasturi Lal Ph. 98186 09444 | Manish (Monu) Ph. 98186 11313

दूसरा मत का साहित्य के प्रति बेजोड़ समर्पण

दूसरा मत साहित्य के प्रति अपनी आस्थावान ऊर्जा को नित्य नूतन सामर्थ्य प्रदान करता रहता है। इसने साहित्य के विभिन्न विधाओं के प्रति अपनी समग्रता और समर्थता समय-समय पर दिखाई है। 2025 का साहित्य-विशेषांक अपने आप में एक बेहतरीन उदाहरण के तौर पर सामने है। घोषणा के अनुरूप इसका ग़ज़ल विशेशांक भी मई प्रथम, 2025 के अंक में ही परिपूर्ण रूप से आ रहा है। वास्तव में साहित्य समाज का दर्पण होता है। यही वजह है कि जब-जब राजनीति लड़खड़ाती रही, अपने पूर्वज साहित्यकारों ने उस लड़खड़ाती हुई राजनीति को क़ायदे से संभाला है। उसे दिशा और दशा देनी की अविस्मरणीय एवं अनुकरणीय भूमिका निभाई। लेकिन इधर साहित्य ख़ुद लड़खड़ाता हुआ नज़र आ रहा है। और राजनीति तो सियासत की सनक में कीचड़ की बदबू से गमक रही है। सियासत की इस सड़ांध से तब तक निज़ात नहीं मिल सकती, जब तक साहित्य अपने पूर्वजों की तरह लड़खड़ाती हुई राजनीति को सहारा देकर थामने की अपने अंदर क़ूवत न पैदा कर ले। और ख़ुद को ख़ुद से संभालने की अपने अंदर ताब न पैदा कर ले। सियासत को संभालने के लिए कॉरपोरेट भी हैं। राजघराने भी हैं। और समाज भी है। लेकिन साहित्य को ऑक्सीजन देने वाला कोई नहीं। यही वजह है कि साहित्य के वेंटीलेटर पर जाने के बाद समाज को भी सहारा देने वाला और उसे संवारने वाला कोई नहीं है। इसलिए साहित्य को वेंटीलेटर से अब बाहर निकलना होगा। उसे अपनी गरिमा को बहाल करना होगा। और सियासत की चाकरी छोड़कर उससे कुछ मांगने और याचना करने की बजाय उसे एक दृष्टिकोण देना होगा। तभी यह देश विश्वगुरु बन सकता है। साहित्यकारों को ठंडे दिमाग़ से अपने गिरेबान में झांकना होगा। उन्हें सत्ता की मलाई से गुरेज़ करना होगा। बहरहाल इस परिस्थिति को बहाल हमसब मिलकर करें। और साहित्य में दिन प्रतिदिन एक ऐसा निखार पैदा करें, ताकि समाज को एक नई सोच और एक नई दिशा मिल सके। **दूसरा मत** ने साहित्य को परिपूर्णता देने के लिए आठ पेज का अतिरिक्त इज़ाफ़ा किया है। अब **दूसरा मत** 72 पेज से **80** पेज का हो गया है। आपके लिए एक खुला प्लेटफॉर्म बनकर सामने है। **दूसरा मत** ने एक प्रण लिया है- साहित्यकारों को पारिश्रमिक देने का। यह सिलसिला चलता रहे, आप भी दुआ करें। इस वर्ष की स्वतंत्रता दिवस से यानी अगस्त सेकेंड, 2025 के अंक से से **दूसरा मत** में प्रकाशित साहित्य के लिए एक मानदेय तय किया गया है।